गद्य सोपान

प्रथम भाग

हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा

वर्गी

सहि

चा

लगे

गद्य सोपान

★

प्रथम भाग

हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा

प्रकाशक :-

प्रियबन्धु

व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग,

हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा

प्रथम संस्करण ५०००—१९५१

द्वितीय संस्करण १०००—१९५३

मूल्य ०-१२-०

मुद्रक —

हिन्दी प्रेस

हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा,

हिन्दी मार्ग, नामपल्ली

हैदराबाद

गद्य सोपान विद्यार्थियों को ध्यान में रख कर लिखा गया है। सङ्कलन में ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी निबन्धों के अतिरिक्त आत्म-चरित्र, जीवनी, रेखाचित्र, कहानी तथा गद्य की सभी मुख्य शैलियों का उपयोग किया गया है। आशा है विद्यार्थी, ज्ञान-सञ्चय के साथ विविध विषयों की शब्दावली से परिचय प्राप्त कर सकेगा।

सूची

सकरूखाँ

एक रोज़ गोशाला के कुएँ पर कुछ काम चल रहा था। उस पर राज (मिस्त्री) सकरूखाँ काम रहा था। उसके साथ मेरा परिचय श्री बद्रीनारायणजी सोढ़ाणी ने कराया था और बताया कि भाई यह बड़ा ही मेहनती और धैर्य प्रकृति का है। इसने सारे जीवन की सुन्दर कमाई करके एक सुन्दर कुआँ बनवाया है, उसे आप भी देखियेगा। मैंने इस बात को सुनने में कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। सुन लिया और कह भी दिया कि कभी देखूँगा। यह सब सुन कर यही समझा कि शायद यह अकेला ही होगा। कुछ पैसा रहा होगा, उसका कुआँ बनवा दिया। एक रोज़ सबेरे के वक्त सकरूखाँ मेरे पास आए और कहा कि आपने मेरा कुआँ देखने को कहा था। सो चलिए। मेरे पास दूसरे काम तो थे लेकिन उनके प्रेम भरे आग्रह के सामने मुझे उनके साथ जाना ही पड़ा। मैंने कुआँ देखा। उसकी बनावट और पानी की व्यवस्था और सुविधा देख कर मुझे बड़ा आनन्द हुआ। कुएँ की गहराई ९९ फीट है। उसके ऊपर चारों तरफ़ पानी खींचने की सुन्दर व्यवस्था है, जिस पर गिर्रियाँ लगी हुई हैं। उसके ऊपर मण्डल, चौकोर चबूतरे का क्षेत्रफल

एक

३६×३६ फिट है। मण्डल ज़मीन से इतना ऊँचा है कि उस के नीचे तीन कमरे बने हुए हैं और एक ओर पानी का टाँका है। मण्डल की बनावट इस प्रकार की है कि वर्षा का पानी अपने आप आ कर टाँके में इकट्ठा हो जाता है। पानी अधिक बरसे तो कुएँ में न जा कर बाहर चला जाता है। उसका एक संस्मरण भी उन्होंने सुनाया। कुआँ तैयार था, टाँका भरा न था। मैं संशय में था कि भरवाऊँ या नहीं, या प्रारंभ करूँ तो किस प्रकार ? एकाएक बादल आये, वर्षा हुई। देखता हूँ तो आधा टाँका भरा हुआ है। दूसरे दिन भी वही हुआ और पूरा टाँका भर गया। इस प्रकार भगवान् ने ही मेरी प्याऊ भरने की शुरूआत की। पानी के टाँके की लम्बाई ११ फीट, चौड़ाई ७ फीट ४ इंच और गहराई ५॥ फीट है। उसमें सदैव निर्मल जल भरा रहता है। नीचे प्याऊ (पशुओं के लिए) बनी हुई है। दो खेली हैं, जिससे कि एक में पानी रहे और दूसरी साफ़ कर दी जाय। स्वयं सकरूखाँजी पानी को चलनी से साफ़ किया करते हैं और प्याऊ को सदैव पूरा भरा रखते हैं, ताकि बकरियों तक को बिना अधिक झुके पानी मिल जाए। वे ही प्याऊ साफ़ करके उसमें चूना पोतते हैं। यह कुआँ ही उनकी इबादत का स्थान है। पशुओं को पानी पीते और ग़रीब हरिजन जैसे लोगों को झुण्ड के झुण्ड पानी भरते देख कर वे आनन्द में विभोर हो जाते हैं।

सकरूखाँजी के परिवार में चार प्राणी हैं। पति, पत्नी,

एक लड़का और ८३ वर्ष की बूढ़ी माँ। माँ अभी भी अपना काम करती है और बकरी चराने ले जाती है। सकरूखाँ ६३ साल के हैं, पर आज भी काम करने की वही लगन है। राज का काम करते हैं। दो रुपए या कभी अधिक मिल जाता है। पर काम करने में नवयुवक की-सी लगन, व तत्परता और कार्य-कुशलता पाई जाती है। कुएँ को बनाने में सकरूखाँजी ने ४,०४५) रु० खर्च किये हैं। चुनाई सारी अपने हाथों की है।

यह रुपया इसी प्रकार शारीरिक श्रम करके कमाया है। ६२ वर्ष तक अनवरत परिश्रम और खाने-पीने में काँट-छाँट करके कौड़ी, कौड़ी जोड़ कर यह रुपया इकट्ठा किया। संवत् १९६२ में मज़दूरी करने निकले। १९९५ में कुएँ का काम आरम्भ किया। १८ दिन में पानी निकला और सारा कार्य चार महीने में पूरा कर लिया। तब से अब तक ११ साल हुए। बैल, चरस आदि पानी निकालने के साधन न होते हुए भी किराये से प्याऊ भरवाई है और अपनी गाढ़ी कमाई में से २,७००) रुपए पानी निकालने में व्यय कर चुके हैं।

घर जाकर देखिये तो अप्रतिग्रह की मूर्ति। सारा सामान २७) रुपए का भी न निकलेगा। मेहनत करके कमाते हैं, इकट्ठा कैसे हो? एक टूटी-सी चारपाई, एक गुदड़ी, एक चक्की और कुछ उपले, यही सारा धन है। और इसीमें वे अपनी सारी सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त हैं। कुएँ के अलावा कोई अभिलाषा नहीं, आकाँक्षा नहीं, चिन्ता नहीं। सकरूखाँजी का लड़का

एक मुसलमान दर्जी के पास सिलाई का काम सीखता था। जब वह मुसलमान दर्जी पाकिस्तान जाने लगा, तो इस लड़के को अपनी मशीनें और अलमारी वगैरह, जो कि पाँच सौ रुपए का माल था एक सौ रुपए में देने के लिए कहा। लड़के ने जब सकरूखाँजी से यह बात कही तो सकरूखाँजी ने कहा कि ५००) रुपए का माल हम १००) रुपए में कैसे ले सकते हैं? यह हमको कैसे हज़म होगा? लेना हो तो जितने का माल हो उतना ही दे कर लेना चाहिए। आख़िर यह माल नहीं लिया। यह किस्सा उनके लड़के ने दुःखी हो कर सुनाया था, क्योंकि वह सकरूखाँजी की दृष्टि नहीं समझ सका था। सकरूखाँजी की तो निष्ठा अपने पसीने की कमाई पर ही है। यह माल उनको चोरी का लगा, आस्तेय व्रतवालों को शिक्षा लेने जैसा यह उदाहरण है।

सकरूखाँजी से पूछा यह कुआँ बनवाने की कल्पना आपके मन में आई कैसे? उन्होंने कहा—जब मैं छोटा था, तब बकरी चराने जाया करता था। वहाँ धूप में प्यास बहुत लगती; तो पानी के लिए तड़पने लगता। जब पानी पीता, तो इतना पी जाता कि पेट फटने लगता था। मुझे महसूस हुआ कि पानी के लिए कुआँ बनाना सब से बड़ा पुण्य-कार्य है। मैं अगर पैसा कमा सका, कुआँ बनवाऊँगा; लेकिन तब मेरी कल्पना तो एक बच्चे की कल्पना थी। बाहर गया, बहुत-सी दुनियाँ देखी। देखा हिन्दुओं की तरफ़ से प्याऊ लग रही है। धर्मशालाएँ बन रही

हैं। मैंने सोचा क्या मुसलमान का भी यही फ़र्ज़ नहीं है ? क्या हम भी ऐसी धार्मिक और ऐसी सार्वजनिक हित की चीज़ें नहीं बना सकते ? विचारों में भरा हुआ मैं सीकर आया। इसी समय एक घटना घटी। मेरे पड़ौस में कुम्हार, चारण, दरोगे, स्वामी आदि गरीब और अछूत जैसी मानेजानेवाली जातियों के लोग रहते हैं। उनको पानी का बड़ा कष्ट होता था। एक कुएँ से पानी भरते समय उच्च जातिवाले हिन्दुओं ने उनका बड़ा अपमान किया, मुझे कुछ बुरा लगा। मैंने कहा इनको भी भर लेने दीजिये। वे मुझ पर गरम हो उठे और कहा सेठ हैं तो इनके लिये एक कुआँ क्यों नहीं बनवा देते ? मैंने खुदा से दुआ की कि हे खुदा, मुझे बल दे जो मैं भी एक कुआँ बनवा सकूं। सम्वत् १८६२ में बम्बई के लिये निकल पड़ा। साढ़े तीन आने प्रति दिन के हिसाब से मैंने राजों के हाथों के नीचे काम करना शुरू किया। धीरे धीरे मैं राज का काम सीख गया। दिन में राज का काम करता, रात को पहरा—दिन की मज़दूरी में जो मिलता, वह मैं जमा करता और रात की मज़दूरी से अपना पेट पालता रहा। यह सारी रकम अपने एक विश्वासपात्र सेठ के पास जमा करता रहा। कुल खटपट और कठिनाई के बाद सीकर दरबार ने कुएँ के लिये ३६×३६ फीट की चौरस ज़मीन मुझे दे दी। सम्वत १९९५ आ गया। मैं सीकर आया और कुआँ खोदने में जुट गया। लोगों ने मेरी हँसी भी उड़ाई कि यहाँ पर कुआँ खोदना तारे तोड़ना जैसा ही है। मैं पूरा नहीं कर सकूँगा।

खुदा ने मेरी मदद की और मेरा विचार-संकल्प पूरा हुआ। जब कुआँ बन कर तैयार हो गया, तब मेरे जात भाई मुसलमानों ने नीचे माने जानेवाले हिन्दु भाइयों के पानी भरने का विरोध किया और यह दावा पेश किया कि मुसलमान की सम्पत्ति पर मुसलमान का अधिकार है। मैंने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता। मेरा कुआँ खुदा की खल्क के लिए समान रूप से खुला है। इसी उद्देश्य से मैंने इसे बनाया है। जिन्हें सब के साथ पानी भरना पसन्द हो, वे पानी भरें। ऐसा करने में जिन्हें ऐतराज़ हो, वे इस कुँए से पानी भरना छोड़ सकते हैं। जब मुसलमान ज्यादा झगड़े पर आमादा हुए तो मैंने दरबार में फ़रियाद की। दरबार बीच में पड़े और यह फ़ैसला दिया कि तीन तरफ़ से हिन्दू पानी भरें और एक तरफ़ से मुसलमान, क्योंकि आबादी के लिहाज़ से मुसलमानों के तो तीन ही घर हैं और हिन्दुओं के ५०, ६०। अब यहाँ सब आनन्द से पानी भरते हैं।" उस कुएँ पर कोई भी स्नान नहीं कर सकता। न कपड़े धो सकता है और न टांके से पानी ही ले सकता है। क्योंकि वह पशुओं के लिये सुरक्षित है। स्नान की व्यवस्था नीचे है। सकरूखाँजी ने बताया कि एक वार मुसलमानों ने उनको इतना तंग किया कि मारे रंज के उन्होंने प्याऊ भराने का काम बन्द कर दिया। एक प्यासी गऊ आई और प्याऊ में पानी न मिलने के कारण पास में पड़ी सकरूखाँजी की खाट को अपने सींगों से उलट दिया। सकरूखाँजी चेते और गाय की भाषा

समझ गये कि वह प्यासी है और इसीलिये उनके साथ तकरार करती है। उस रोज से पानी भराने का काम फिर से शुरू कर दिया और उसमें फिर कभी गलती नहीं की।

सकरूखाँजी की केवल एक अभिलाषा थी कि यह प्याऊ भरने का कार्य उनके मरने के बाद भी चालू रहे। वे कहते थे कि यदि राज्य की ओर से थोड़ी जमीन मोल भी मिल जाए, तो वह किसी माली को दे दूँ जो जमीन को सींचे और मेरे मरने के बाद प्याऊ भी भराता रहे। उनका लड़का है, पर भरोसा नहीं वह प्याऊ को भरायेगा या नहीं। इस बात का उन्हें दुःख है। उंगली के इशारे से उन्होंने मुझे बताया कि हमारा कब्रिस्तान यह पास में ही है। आखिर तो मुझे वहीं पर जाना ही है, तो जब तक मेरे शरीर से इन मूक पशुओं की और इन गरीब लोगों की जो भी सेवा बन सकती है करता रहूँ।

उनके इस कार्य को देख कर सीकर दरबार तथा अन्य भी कई अच्छे-अच्छे लोग बड़े खुश हुए और उनको इस पुण्य कार्य के लिये कुछ पैसे देने का प्रयत्न भी किया, लेकिन सकरूखाँ ने कुछ भी लेने से इन्कार कर दिया। सुनता हूँ इस नमूने का कुआँ सारे सीकर में आस-पास के भी बड़े-बड़े कस्बों में नहीं है। रेगिस्तान में ऐसा कुआँ बनाना कितना महान् कार्य है, इसकी दूसरे लोग कल्पना भी शायद ही कर सकें। यह सब देख और सुन कर मेरा हृदय उनके प्रति श्रद्धा और आनन्द से भर गया। अगर मैं शरीर से उनके पैर पकड़ता, तो वे घबरा

जाते। लेकिन मन ही मन उनके चरणों में मेरा मस्तक झुक गया। बहुत से लोग मानते हैं कि धर्म कार्य करने का गौरव तो हिन्दू-जाति को ही है। मुसलमानों के बारे में तो लोगों की बड़ी ही विपरीत धारणा बन गई है। इस प्रकार अपने पसीने की कमाई से सार्वजनिक हित के लिए और बाद में भी उसी की सेवा में लीन रहने वाला हिन्दू या अन्य धर्मावलम्बी मैंने तो नहीं देखा। लोग लाखों कमाते हैं, चोरबाज़ारी करते हैं, सट्टा खेलते हैं, उसमें से कुछ पुण्य भी करते हैं, लेकिन सकरूखाँजी की पंक्ति में खड़ा हो सके, ऐसे एक भी व्यक्ति को मैं नहीं जानता। मानवता किसी धर्म या किसी जाति का ठेका नहीं है। खुदा की खल्क को समान रूप से प्यार करनेवाले मुसलमानों में न जाने कितने सपूत होंगे। सचमुच ऐसे परोपकारी पुण्य पुरुषों से ही धर्म की रक्षा होती है। ईश्वर सकरूखाँजी का सा दिल, श्रमनिष्ठा, शुभसंकल्प के प्रति लगन और सर्व-धर्म-समान भाव की भावना सब हिन्दू और मुसलमानों को दे यही प्रार्थना है।

प्रश्नः-

१. सकरूखाँ कौन था और उसने कुआँ क्यों बनाया ?

२. सकरूखाँ की गिनती महापुरुषों में क्यों की जाती है ?

३. अर्थ बताइये-अपरिग्रह, आस्तेय, धर्म, समभाव, धर्मावलम्बी, दरबार, मरुभूमि।

बोनालू

बोनालू धार्मिक दृष्टि से ही नहीं कला की दृष्टि से भी आन्ध्र की सुरुचि का प्रदर्शन करते हैं।

श्रावण मास में जब आकाश बादलों से घिरा रहता है, पृथ्वी पर चारों ओर हरियाली ही हरियाली दिखाई देती है। पानी की फुहार मन के आनन्द को सौगुना करती है। उस समय आन्ध्र के नगरों की सड़कें और ग्रामों के गलिहारों पर चंग, शहनाई या किसी अन्य बाजे पर लय और थाप के साथ दस, बीस, पचास, हजार और इससे भी अधिक सख्या में स्त्रियों का समूह अपने कुंकुम मण्डित मस्तक पर कलश सजाये मन्थर गति से देवी के मन्दिर की तरफ जाता हुआ दिखाई देता है। इस प्रदर्शन को बोनालू कहते हैं। बोनालू एक आन्ध्र महिलाओं का अपना त्यौहार है। इस त्यौहार को महिलाएँ सामूहिक रूप में मनाती हैं। स्त्रियों में बोनालू निकालते समय धार्मिक भावना काम करती है, साथ ही उनकी सुरुचि का उपयोग भी हो जाता है।

उत्तर भारत में शीतला की अर्चना में बासोड़ा होता है, वर्ष भर में तीन चार बासोड़े होते हैं, जिसमें होली के बाद का बासोड़ा अधिक प्रसिद्ध है।

बासोड़े से पहले दिन भोजन तैयार कर लिया जाता है। बासोड़े का भोजन भी सामान्य दिनों से अलग होता है। शीतला को बासे भोजन का भोग लगता है। घरवाले भी बासा भोजन ही करते हैं।

आन्ध्र का बोनालू समारोह भी कुछ इसी तरह का है। आँध्र महिलाओं की कला-प्रियता ने इसे भिन्न रूप दे दिया है। आँध्र के कुछ स्थानों पर बोनालू के लिए निश्चित समय नहीं है। चेचक फूट जाने पर बोनालू की बाढ़ आ जाती है। शिवरात्रि के आस-पास भी बोनालू निकाले जाते हैं। श्रावण मास और इस मास में भी सोमवार विशेष रूप से इस कार्य के लिए निश्चित है।

"बोनम्" का अर्थ है विशेष प्रकार की खिचड़ी, पीतल के बड़े कलश में अपनी शक्ति के अनुसार दाल चावल मिला कर पकाये जाते हैं, उसमें इतनी हल्दी डाल दी जाती है कि रंग आ जाए। "बोनम्" पकने पर उस पात्र को भूमि पर रख देते हैं। चूल्हे की कालिख और राख को सावधानी से पोंछ दिया जाता है कि उस पर कोई चिह्न नहीं रह जाता। उस पात्र पर हल्दी लगा कर कुंकुम-हल्दी और रोली के रंग-विरंगे बिन्दु अंकित किये जाते हैं। नीम के पत्तों की माला गूँथ कर कलश के गले में पहनाई जाती है और फिर एक पात्र रख दिया जाता है, जिसे कड़मुन्ता कहते हैं। कड़मुन्ता में गुड़ का पानी रक्खा जाता है। एक बात ध्यान देने योग्य है कि "बोनम्" में

नमक न डाल कर गुड़ का पानी ही डाला जाता है, इस तरह खिचड़ी नमकीन न बन कर मीठी बन जाती है। गुड़ के पात्र पर कञ्चलु होता है, जिसमें तेल भर कर दीपक जोड़ दिया जाता है। दीपक का मन्द मन्द प्रकाश बाहर से दिखाई देता है। किन्तु उसे इस तरह सँवार कर रख दिया जाता है कि हवा के झोंके उसे हानि नहीं पहुंचा सकते। तेलुगु भाषा में बहुवचन बनाते समय कुछ शब्दों के पीछे ल्लु प्रत्यय लगाया जाता है। बोनम् का बहुवचन होता है 'बोनाल्लू'।

आँध्र में शीतला को पोचम्मा कहते हैं। प्रायः गांव के बाहर और कहीं कहीं गाँव के अन्दर भी पोचम्मा की मढ़ी होती है, जिसे यहां गुड़ी कहते हैं। मुहल्ले या गाँव भर की स्त्रियाँ सिर पर मुँडासा रख कर उस पर कलश, कलश पर कञ्चुलु सजा कर ढप या बाजे के साथ निकलती हैं। ढप बजानेवाले परम्परागत होते हैं। उसे आँध्र में 'वैनलोड्डू' कहते हैं। पोचम्मा के सम्बन्ध में तेलुगु में बहुत से ग्राम-गीत बने हुए हैं। 'वैनलोड्डू' ढप या चंग के साथ पोचम्मा के गीत भी गाता चलता है। वैनलोड्डू के गीत की टेक प्रायः इस तरह होती है,—अम्माँ, पोचम्मा, कापडवम्मा माँ शीतले रक्षा कर) इस के आगे और पद जोड़ दिये जाते हैं!

पोचम्मा के सम्बन्ध में बहुत-सी कहानियाँ प्रचलित हैं। देवी सप्तशती की तरह यहां देवी-चरित्र प्रसिद्ध है। उसमें महिषासुर मर्दिनी और काली की तरह पोचम्मा का भी वर्णन है। पोचम्मा

शीतलादेवी का ही दूसरा नाम है। जब 'बोनालू' ले कर महिलाएँ मढ़ी की तरफ चलती रहती हैं, तब चंग की थापों के साथ कोई-कोई बड़ी बूढ़ी या युवा स्त्री उछलने कूदने लगती है। उसके लम्बे-लम्बे काले बाल खुल कर मुंह पर छा जाते हैं। थाप के साथ उसके पद्-चाप प्रभाव शाली होते हैं। उस गतिमान नृत्य के कारण पसीने की धार बहने लग जाती है। उससे उसके मस्तक का कुंकुम घुल कर पूरा मुंह रक्तवर्ण कर देता है। हल्दी भी घुलती है। लोग समझते हैं उस स्त्री में देवी आ गई, जिस स्त्री में देवी आती है उसे शिवम् कहते हैं। कुछ लोग इसे सेंधी (ताड़ी) का चमत्कार कहते हैं, किन्तु शिवम् जिस शक्ति से चारों तरफ घूमता है, जिस फुर्ती से उछलता है और जिस गौरव से आगे पग रखता है और अपनी क्रियाओं को घण्टों एक-सी रखता है, उसे देखते हुए बड़े-से-बड़े बलशाली को आश्चर्य होगा। शिवम् के हाथ में पत्तों भरी नीम की डालियां होती हैं, जिन्हें वह अपने चारों तरफ फेंकता है। उसके खुले बालों से महिलाएं अपने बालकों का मुँह पोछती हैं। शिवम् के आगे प्रार्थना करती हैं।

पोचम्मा की आराधना करनेवालों में माँसाहारी और निरामिष दोनों प्रकार के व्यक्ति होते हैं। मांसाहारी और कभी निरामिष भी। अपनी मन्नत पूरी होने पर 'बोनालू' के अवसर पर माता को बकरा, मुर्गी और भैंसे की भी बलि देते हैं। अब बलि देने की प्रथा बहुत कम होती जा रही है।

जब 'बोनालू' पोचम्मा की मढ़ी के पास पहुँचता है तो मढ़ी के पुजारी तथा उसके व्यक्ति आगत महिलाओं के पाँवों पर कलश से पानी डालते हैं, जिससे वे शुद्ध हो कर देवी के पास जाने लायक हो सकें। तीनों पात्र अलग-अलग रख दिये जाते हैं। कड़मुन्ता से गुड़ का पानी ले देहरी धोई जाती है, फिर थोड़ा-सा 'बोनम्' देवी के भोग में चढ़ाया जाता है। इसके बाद महिलाएँ अपने घर को पात्रों सहित लौट जाती हैं। देवी को पत्तलों पर भोग लगाया जाता है।

कहीं किसी मढ़ी का पुजारी ब्राह्मण होता है किन्तु अधिकांश स्थानों पर पोचम्मा का पुजारी धोबी ही होता है। उत्तर भारत में शीतला का वाहन गधा और पुजारी कुम्हार माना जाता है किन्तु आन्ध्र में वाहन तो गधा ही रहा, पुजारी कुम्हार न होकर धोबी ही होता है। जिसे तेलुगु में चाकलि कहते हैं। पूजा से पहले धनी यजमानों के लिए चाकलि मिट्टी के दो कुल्हड़ों में सेन्धी ले आता है। सेन्धी आन्ध्र का विशेष पेय है, जो वृक्ष से दूध के रूप में निकलता है और धीरे धीरे मादक बनता जाता है, चाकलि पहिले पानी से देह धो कर उसे सेंधी से सींचता है। फिर दूसरे पात्र को देवी के मुँह के पास ले जा कर रिक्त कर देता है। इस क्रिया के साथ वह यजमान के परिवार में से एक-एक का नाम लेता जाता है और उनके मंगल की कामना करता है। चाकलि भोग और अवशिष्ट बोनालू पर अधिकार रखता है। बोनम् घर में नहीं खाया जाता,

पूरा चाकलि को दे दिया जाता है।

उत्सव और पर्वों के अवसर पर पूरे भारतवर्ष में सेवक जाति के लोग अपना अपना हिस्सा लड़ झगड़ कर चुकवाते हैं। एक समय था जब सेवक बिना वेतन के वर्ष भर काम करता था और पर्व, उत्सव या विवाह-शादी में अपने नेग के रूप में मेहनताना पाता था। अब इस प्रकार की वृत्ति समाप्त होती जा रही है। अन्न या भोजन का स्थान पैसा लेता जा रहा है और वह भी निश्चित् मात्रा में। बोनम् और उसके साथ कुछ और दक्षिणा प्राप्त करने के लिये चाकलि और बैनलोड़ू यजमान के साथ जिस तरह की तकरार करते हैं, वह देखने लायक होती है। वे लोग घर तक जाते हैं और अधिक से अधिक पाने की भरसक चेष्टा करते हैं।

'बोनाल्लु' में सौ, दो-सौ स्त्रियाँ ही नहीं रहतीं, तीर्थ स्थानों पर तो हजारों स्त्रियाँ बोनाल्लु ले कर निकलती हैं। हैदराबाद राज्य में 'वेमुलवाडा' शैवों का तीर्थ स्थल है। शिवरात्रि के समय आसपास के दस बीस गाँवों से शूद्र जाति की स्त्रियाँ बोनम लेकर यहां आती हैं। एक समय तीन हज़ार स्त्रियों को लेखिका ने बोनाल्लु लाते देखा। उस समय का दृश्य देखने योग्य था। जिन लोगों को धार्मिक क्रिया पर विश्वास नहीं वे भी इस प्रदर्शन में पर्याप्त कला और सुरुचि का परिचय प्राप्त कर सकते थे। प्रदर्शन के साथ युवा और वृद्ध भी थे, जिनमें से अधिकांश सेंधी के नशे में सुधबुध खोये हुए थे। युवक आगे

आगे लट्ठ घुमा कर अपने कर्तब दिखा रहे थे।

कुछ स्थानों पर पोचम्मा की इस पूजा में वाममार्ग का अधिक प्रभाव है। वहां रात्रि के समय देवी के आगे पुजारी बोनम् इस तरह रखता है कि उसे कोई दूसरा न देख सके, पुजारी और उसके सहचर शराब पी कर नाचते गाते और रतजगा करते हैं।

बोनम् में बलि का रक्त भी मिश्रित करते हैं। रात्रि के पिछले प्रहर में रक्त मिश्रित 'बोनम्' मार्ग पर और घरों के बाहर बखेर दिया जाता है। लोगों का विश्वास है कि जिस गली और पथ में देवी का प्रसाद गिर गया वहां चेचक नहीं होती। कुछ लोग बिखरा हुआ बोनम् समेट कर अपने घर में रख लेते हैं, उनका विश्वास है कि बोनम् के रहते उनके घर में चेचक प्रविष्ट नहीं होगी।

'बोनालू' से हमें धार्मिक दृष्टि से एक बात यह मालूम होती है कि यहाँ शैव और शाक्तों में कोई अन्तर नहीं रहा अथवा शाक्तों ने या शैवों ने एक दूसरे के पर्वों को अपना लिया। शैव सम्प्रदाय का उद्भव द्राविड़ों में ही हुआ होगा, किन्तु निश्चय से नहीं कहा जा सकता कि शैव और शाक्तों में कौन पुराना है।

अभ्यास :—

१ निम्नलिखित शब्दों को वाक्यों में प्रयोग कीजिये।

बलि, निश्चितमात्रा, लड़-झगड़कर, मढ़ी।

२ 'बोनालू' का सारांश कम-से-कम बीस पंक्तियों में लिखिये।

मेरी शादी १९१६ में वसन्तपंचमी के दिन हुई थी। उस साल गरमी में हमने कुछ महीने काश्मीर में बिताये। मैंने अपने परिवार को तो श्रीनगर की घाटी में छोड़ दिया और अपने एक चचेरे भाई के साथ कई हफ्ते तक पहाड़ों में घूमता रहा; तथा लद्दाख रोड तक बढ़ता चला गया।

संसार के उस उच्च प्रदेश की उन सँकड़ी निर्जन घाटियों में जो तिब्बत के मैदान की तरफ ले जाती हैं, घूमने का यह मेरा पहला अनुभव था। जोजीला घाटी की चोटी से हमने देखा तो हमारे एक तरफ नीचे की ओर पहाड़ों की घनी हरियाली थी और दूसरी तरफ खाली कड़ी चट्टान। हम उस घाटी की सँकड़ी तह के ऊपर चढ़ते चले गये, जिसके दोनों ओर पहाड़ हैं। एक तरफ़ बरफ़ से ढकी हुई चोटियां चमक रही थीं, और उसमें से छोटे-छोटे ग्लेशियर—हिमसरोवर—हमसे मिलने के लिए नीचे को रेंग रहे थे। हवा ठंडी और कटीली थी, लेकिन दिन में धूप अच्छी पड़ती थी और हवा इतनी साफ़ थी कि अक्सर हमें चीजों की दूरी के बारे में भ्रम हो जाता था। वे दरअसल जितनी दूर होती थीं, हम उन्हें उससे बहुत कम दूर समझते थे। धीरे-

धीरे सूनापन बढ़ता गया, पेड़ों और वनस्पतियों तक ने हमारा साथ देना छोड़ दिया—सिर्फ नंगी चट्टान और बरफ और पाला और कभी-कभी कुछ सुन्दर फूल रह गये। फिर भी प्रकृति के इन जंगली और सुनसान निवासों में मुझे अजीब संतोष मिला। मेरे उत्साह और उमंग का ठिकाना न था।

इस यात्रा में मुझे एक दिल को कँपा देनेवाला अनुभव हुआ। ज़ोजीला घाटी से आगे यात्रा करते हुए एक जगह जो मेरे ख़याल में मातायन कहलाती थी, हमसे कहा गया कि अमरनाथ की गुफ़ा यहाँ से सिर्फ आठ मील दूर है। यह ठीक था कि बीच में बुरी तरह हिम से ढका हुआ एक बड़ा पहाड़ पड़ता था, जिसे पार करना था। लेकिन उससे क्या? आठ मील होते ही क्या हैं? जोश खूब था और तज़रबे नदारद। हमने अपने डेरे-तंबू जो ग्यारह हज़ार पाँच सौ फीट की ऊँचाई पर थे, छोड़ दिये और एक छोटे-से दल के साथ पहाड़ पर चढ़ने लगे। रास्ता दिखाने के लिए हमारे साथ वहाँ का एक गडरिया था।

हम लोगों ने रस्सियों के सहारे कई बरफीली नदियों को पार किया। हमारी मुश्किलें बढ़ती गयीं तथा साँस लेने में भी कठिनाई मालूम होने लगी। हमारे कुछ सामान उठानेवालों के मुँह से खून निकलने लगा, हालाँकि उन पर बहुत बोझ नहीं था। इधर बर्फ पड़ने लगी और बर्फीली नदियाँ भयानक रूप से रपटीली हो गयीं। हम लोग बुरी तरह थक गये और एक-एक

कदम आगे बढ़ने के लिए हमें बहुत कोशिश करनी पड़ती थी। लेकिन फिर भी हम यह मूर्खता करते ही गये। हमने अपना खीमा सुबह चार बजे छोड़ा था और बारह घंटे लगातार चढ़ते रहने के बाद एक सुविशाल हिम-सरोवर देखने का पुरस्कार मिला। यह दृश्य बहुत ही सुन्दर था। उसके चारों ओर बरफ से ढकी हुई पर्वत-चोटियाँ थीं, मानो देवताओं का मुकुट अथवा अर्द्ध-चन्द्र हो। परन्तु ताज़ा बरफ़ और कुहरे ने शीघ्र ही इस दृश्य को हमारी आँखों से ओझल कर दिया। पता नहीं कि हम कितनी ऊँचाई पर थे, लेकिन मेरा खयाल है कि हम लोग कोई पन्द्रह सोलह हज़ार फीट ऊँचाई पर ज़रूर होंगे, क्योंकि हम अमरनाथ गुफा से बहुत ऊँचे थे। अब हमें इस हिम सरोवर को, जो सम्भवतः आध मील लम्बा होगा, पार करके दूसरी तरफ़ नीचे गुफा को जाना था। हम लोगों ने सोचा कि चढ़ाई खत्म होने से हमारी मुश्किलें भी खत्म हो गयी होंगी, इसलिए बहुत थके होने पर भी हम लोगों ने हँसते हुए यात्रा की यह मंजिल भी तय करनी शुरू की। इसमें बड़ा धोखा था, क्योंकि वहाँ दरारें बहुत-सी थीं और ताजी गिरनेवाली बरफ खतरनाक दरारों को ढक देती थी। इस नये बर्फ ने ही मेरा क़रीब-क़रीब खात्मा कर दिया होता, क्योंकि मैंने ज्यों ही उसके ऊपर पैर रखा, वह नीचे को खिसक गयी और मैं धम्म से मुँह बाये हुए एक विशाल दरार में जा गिरा। यह दरार बहुत बड़ी थी और कोई भी चीज़ उसमें बिलकुल नीचे पहुँच कर हज़ारों वर्ष बाद

तक भूगर्भशास्त्रियों की खोज के लिए इत्मीनान के साथ सुरक्षित रह सकती थी। लेकिन मेरे हाथ से रस्सी नहीं छूटी और मैं दरार की बाजू को पकड़े रहा और ऊपर खींच लिया गया। इस घटना से हम लोगों के होश उड़ गये थे, फिर भी हम लोग आगे चलते ही गए। लेकिन दरारों की तादाद और चौड़ाई आगे जा कर और भी बढ़ गई। इनमें से कुछ को पार करने के कोई भी साधन हमारे पास न थे, इसलिए अंत में हम लोग थके-मांदे हताश हो लौट आये और इस प्रकार अमरनाथ की गुफ़ा अनदेखी रह गयी।

काश्मीर के पहाड़ों तथा ऊँची-ऊँची घाटियों ने मुझे ऐसा मुग्ध कर लिया कि मैंने एक बार फिर वहाँ जाने का संकल्प किया। मैंने कई योजनाएँ सोचीं, और कई यात्राओं के मनसूबे बाँधे और उनमें से एक के तो ख्याल ही से मेरी खुशी का ठिकाना न रहा। वह थी तिब्बत की अलौकिक झील मानसरोवर और उसीके पास का हिमाच्छादित कैलास। यह अठारह बरस पहले की बात है और मैं आज भी कैलास तथा मानसरोवर से उतना ही दूर हूँ जितना पहले था। मैं फिर काश्मीर न जा सका, हालाँकि वहाँ जाने की मेरी बहुत इच्छा रही। लेकिन मैं राजनीति और सार्वजनिक कामों के जंजाल में अधिकाधिक उलझता गया। पहाड़ों पर चढ़ने या समुद्र को पार करने के बदले मेरी सैलानी तबियत को जेलों में जा कर ही सन्तोष करना पड़ा। लेकिन अब भी मैं वहाँ जाने के मुन्सूबे गढ़ा करता हूं,

क्योंकि वह तो एक ऐसे आनन्द की बात है जिसे कोई जेल में भी नहीं रोक सकता। और इसके अलावा जेलों में ये स्कीमें सोचने के सिवा और कोई करे भी क्या ? अतः मैं उस दिन का स्वप्न देख रहा हूं जब मैं हिमालय पर चढ़ कर उसे पार करूँगा। और उस झील तथा कैलास के दर्शन करके अपना मनोरथ पूरा करूँगा। परन्तु इस जीवन की घड़ियाँ दौड़ती जा रही हैं, जवानी अधेड़पन में बदल रही है और कभी-कभी मैं यह सोचता हूं कि मैं इतना बूढ़ा हो जाऊँगा कि कैलास और मानसरोवर जा ही न सकूँगा। परन्तु यद्यपि यात्रा का अन्त न भी दिखाई दे, तब भी यात्रा करने में हमेशा आनन्द ही आता है।

मेरे अन्तर्पट पर इन गिरिशृंगों की पड़ती छाया,
सांध्य गुलाबों से रंजित है जिनकी भीषण दुर्गमता;
फिर भी मेरे प्राण मुग्ध पलकों पर बैठे अकुलाते,
शांत शुभ्र हिम के ये प्यासे, है कैसी पागल ममता।,

अभ्यास :—

१ जवाहरलालजी को हिमालय की यात्रा क्यों प्रिय है ?

२ यदि आपने किसी पहाड़ की यात्रा की है तो उसका वर्णन करते हुए अपने मित्र को एक पत्र लिखिये।

३ लेखक कठिनाई में क्यों पड़ा ?

ईदगाह

रमज़ान के पूरे तीस रोजों के बाद आज ईद आई है। कितना मनोहर, कितना सुहावना प्रभात है। वृक्षों पर कुछ अजीब हरियाली है, खेतों में कुछ अजीब रौनक है, आसमान पर कुछ अजीब लालिमा है। आज का सूर्य देखो, कितना प्यारा, कितना शीतल है, मानो संसार को ईद की बधाई दे रहा है। गाँव में कितनी हलचल हैं। ईदगाह जाने की तैयारियाँ हो रही हैं। किसी के कुर्ते में बटन नहीं है। कोई पड़ोस के घर से सुई-तागा लेने दौड़ा जा रहा है। किसी के जूते कड़े हो गए हैं, वह उनमें तेल डालने के लिए तेली के घर भागा जाता है। जल्दी-जल्दी बैलों को सानी-पानी दे दें। ईदगाह से लौटते-लौटते दो-पहर हो जाएगी। तीन कोस का पैदल रास्ता फिर सैकड़ों आदमियों से मिलना-भेंटना, दो-पहर के पहले लौटना असम्भव है। लड़के सबसे ज्यादा प्रसन्न हैं। किसी ने एक रोज़ा रखा है, वह भी दो-पहर तक, किसीने वह भी नहीं, लेकिन ईदगाह जाने की खुशी उनके हिस्से की चीज़ है। रोज़े बड़े बूढ़ों के लिए होंगे इनके लिए तो ईद है। रोज़ ईद का नाम रटते थे। आज वह आ गई। अब जल्दी पड़ी है कि लोग ईदगाह क्यों नहीं चलते।

इन्हें गृहस्थी की चिन्ताओं से क्या प्रयोजन ! सेवैयों के लिए घर में दूध और शक्कर है या नहीं, इनकी बला से, ये तो सेवैयाँ खाएँगे। वे क्या जानें कि अब्बाजान क्यों बदहवास चौधरी क़ायमअली के घर दौड़े जा रहे हैं। उन्हें क्या खबर चौधरी आंखें बदल लें तो यह सारी ईद मुहर्रम हो जाय। उनकी अपनी जेबों में तो कुबेर का धन भरा हुआ है। बार-बार जेब से अपना खजाना निकाल कर गिनते हैं। और खुश हो कर फिर रख लेते हैं। महमूद गिनता है, एक-दो, दस-बारह ! उसके पास बारह पैसे हैं। मोहसिन के पास एक, दो, तीन, आठ, नौ, पन्द्रह पैसे हैं। इन्हीं अनगिनती पैसों में अनगिनती चीजें लाएँगे— खिलौने, मिठाइयाँ, बिगुल, गेंद और न जाने क्या-क्या। और सबसे ज्यादा प्रसन्न है हामिद। वह चार-पाँच बरस का गरीब-सूरत, दुबला-पतला लड़का, जिसका बाप गत वर्ष हैजे की भेंट हो गया और माँ न जाने क्यों पीली होती-होती एक दिन मर गई। किसी को पता न चला, क्या बीमारी है। कहती भी तो कौन सुनने वाला था। दिल पर जो कुछ बीतती थी, वह दिल में ही सहती थी और जब न सहा गया तो संसार से बिदा हो गई। अब हामिद अपनी बूढ़ी दादी अमीना की गोद में सोता है और उतना ही प्रसन्न है।

उसके अब्बाजान रुपए कमाने गए हैं। बहुत-सी थैलियाँ ले कर आएँगे। अम्मीजान अल्लाह मियाँ के घर से उसके लिए बड़ी अच्छी-अच्छी चीजें लाने गई हैं; इसलिए हामिद प्रसन्न है।

आशा तो बड़ी चीज़ है, और फिर बच्चों की आशा ! उनकी कल्पना तो राई का पर्वत बना लेती है। हामिद के पांव में जूते नहीं हैं, सिर पर एक पुरानी-धुरानी टोपी है जिसका गोटा काला पड़ गया है फिर भी वह प्रसन्न है। जब उसके अब्बाजान थैलियां और अम्मीजान नियामतें ले कर आएँगी, तो वह दिल के अरमान निकाल लेगा। तब देखेगा महमूद, मोहसिन, नूरे और सम्मी कहां से उतने पैसे निकालेंगे। अभागिन अमीना अपनी कोठरी में बैठी रो रही है। आज ईद का दिन और उसके घर में दाना नहीं ! आज आबिद होता तो क्या इसी तरह ईद आती और चली जाती ! इसी अन्धकार और निराशा में वह डूबी जा रही है। किसने बुलाया था इस निगोड़ी ईद को? इस घर में उसका काम नहीं; लेकिन हामिद ! उसे किसी के मरने जीने से क्या! मतलब ? उसके अन्दर प्रकाश है, बाहर आशा। विपत्ति अपना सारा दल-बल ले कर आए, हामिद की आनन्द-भरी चितवन उसका विध्वंस कर देगी।

हामिद भीतर जा कर दादी से कहता है, तुम डरना नहीं अम्मां, मैं सबसे पहले आऊँगा। बिलकुल न डरना।

अमीना का दिल कचोट रहा है। गांव के बच्चे अपने-अपने बाप के साथ जा रहे हैं। हामिद का बाप अमीना के सिवाय और कौन है ? उसे कैसे अकेले मेले जाने दे। उस भीड़-भाड़ में बच्चा कहीं खो जाय तो क्या हो। नहीं, अमीना उसे यों न जाने देगी। नन्ही-सी जान ! तीन कोस चलेगा कैसे ! पैर में छाले

पड़ जाएँगे। जूते भी तो नहीं हैं। वह थोड़ी-थोड़ी दूर पर उसे गोद ले लेगी। लेकिन यहां सेवैयां कौन पकाएगा ? पैसे होते तो बीच में लौटते-लौटते सब सामग्री जमा करके चटपट बना लेती यहां तो घण्टों चीजें जमा करते लगेंगे। मांगे ही का भरोसा ठहरा। उस दिन फ़हीमन के कपड़े सिए थे। आठ आने पैसे मिले थे। उस अठन्नी को ईमान की तरह बचाती चली आती थी इसी ईद के लिए; लेकिन कल ग्वालन सिर पर सवार हो गई, तो क्या करती। हामिद के लिए कुछ नहीं है, तो दो पैसे का दूध तो चाहिए ही। अब तो कुल दो आने पैसे बच रहे हैं। तीन पैसे हामिद की जेब में, पांच अमीना के बटुए में। यही तो बिसात है और ईद का त्यौहार, अल्लाह ही बेड़ा पार लगाए। धोबन, नाइन और मेहतरानी और चुड़िहारिन सभी तो आएँगी। सभी को सेवैयाँ चाहिए और थोड़ा किसी की आँखों लगता नहीं। किस-किस से मुँह चुराएगी और मुँह क्यों चुराए? साल भर का त्यौहार है। जिन्दगी खैरियत से रहे, उनकी तकदीर भी तो उसी के साथ है। बच्चे को खुदा सलामत रखे, ये दिन भी कट जाएँगे।

गाँव से मेला चला और बच्चों के साथ हामिद भी जा रहा था। कभी सब-के-सब दौड़ कर आगे निकल जाते। फिर किसी पेड़ के नीचे खड़े हो कर साथ वालों का इन्तज़ार करते। वे लोग क्यों इतना धीरे धीरे चल रहे हैं। हामिद के पैरों में तो जैसे पर लग गए हैं। वह कभी थक सकता है! शहर का

दाम
पक्क
लगी
पर
निक
हैं।
हैं; य
होंगे
बड़ी-
न जा
के मद
रोज़ म
तरह
सुना है
तामाशे
शाम
मूछों-द
वह दे द
लुढ़क ज
मह
लगे, अल्लाह कसम।

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

उसे
ते तो
लेती
रोसा
पैसे
ी थी
ो गई
े का
हैं।
तो
ाए।
ँगी।
नहीं।
साल
क़दीर
झे, ये
जा
फिर
रते।
रों में
ता जस पर ... शहर का

दामन आ गया। सड़क के दोनों ओर अमीरों के बगीचे हैं। पक्की चार-दिवारी बनी हुई है। पेड़ों में आम और लीचियाँ लगी हुई हैं। कभी-कभी कोई लड़का कंकड़ी उठा कर आम पर निशाना लगाता है। माली अन्दर से गाली देता हुआ निकलता है। लड़के वहाँ से एक फलाँग पर हैं। खूब हँस रहे हैं। माली को कैसा उल्लू बनाया है।

बड़ी-बड़ी इमारतें आने लगीं। यह अदालत है, यह कालेज है; यह क्लबघर है। इतने बड़े कालेज में कितने लड़के पढ़ते होंगे? सब लड़के नहीं हैं जी! बड़े बड़े आदमी हैं; सच। उनकी बड़ी-बड़ी मूछें हैं। इतने बड़े हो गये, अभी तक पढ़ने जाते हैं। न जाने कब तक पढ़ेंगे और क्या करेंगे इतना पढ़ कर? हामिद के मदरसे में दो-तीन बड़े-बड़े लड़के हैं, बिलकुल तीन कौड़ी के, रोज़ मार खाते हैं, काम से जी चुरानेवाले! इस जगह भी उसी तरह के लोग होंगे और क्या। क्लबघर में जादू होता है। सुना है यहां मुरदों की खोपड़ियां दौड़ती हैं। और बड़े-बड़े तामाशे होते हैं; पर किसी को अन्दर नहीं जाने देते। और यहां शाम को साहब लोग खेलते हैं। बड़े-बड़े आदमी खेलते हैं, मूछों-दाढ़ीवाले और मेमें भी खेलती हैं, हमारी अम्मां को वह दे दो, क्या नाम है, बैट, तो उसे पकड़ ही न सकें। घुमाते ही लुढ़क जाएँ।

महमद ने कहा—हमारी अम्मीजान का तो हाथ कांपने लगे, अल्लाह कसम।

मोहसिन बोला—चलो, मनों आटा पीस डालती हैं। ज़रा-सा बैट पकड़ लेंगी, तो हाथ काँपने लगेंगे। सैकड़ों घड़े पानी रोज़ निकालती हैं। पांच घड़े तो मरी भैंस पी जाती है। किसी मेम को एक घड़ा पानी भरना पड़े तो आंखों तले अन्धेरा आ जाए।

महमूद—लेकिन दौड़ती तो नहीं, उछल कूद तो नहीं सकतीं।

मोहसिन—हां, उछल कूद तो नहीं सकतीं; लेकिन उस दिन मेरी गाय खुल गई थी और चौधरी के खेत में जा पड़ी थी तो अम्मां इतना तेज़ दौड़ीं कि मैं उन्हें न पा सका, सच।

आगे चले। हलवाइयों की दुकानें शुरू हुईं। आज खूब सजी हुई थीं। इतनी मिठाइयां कौन रखता है? देखो न एक एक दुकान पर मनों होंगी। सुना है, रात को जिन्नात आ कर खरीद ले जाते हैं। अब्बा कहते थे कि आधी रात को एक आदमी हर दुकान पर जाता है। और जितना माल बचा होता है वह तुलवा लेता है और सचमुच के रुपये देता है, बिलकुल ऐसे ही रुपये।

हामिद को यकीन न आया ऐसे रुपये जिन्नात को कहां से मिल जाएँगे?

मोहसिन ने कहा—जिन्नात को रुपयों की क्या कमी? जिस खज़ाने में चाहे चले जाएँ। लोहे के दरवाजे तक उन्हें नहीं रोक सकते जनाब, आप हैं किस फेर में। हीरे, जवाहरात तक उनके पास रहते हैं। जिससे खुश हो गए, उसे टोकरों जवाहरात

दे दिये। अभी यहाँ बैठे हैं, अभी कलकत्ता पहुँच जाएँ।

हामिद ने फिर पूछा—जिन्नात बहुत बड़े बड़े होते होंगे?

मोहसिन—एक-एक आसमान के बराबर होता है जी। ज़मीन पर खड़ा हो जाय तो उसका सिर आसमान से जा लगे, मगर चाहे तो एक लोटे में घुस जाए।

हामिद—लोग उन्हें कैसे खुश करते होंगे? कोई मुझे वह मन्त्र बता दे तो एक जिन्न को खुश कर लूँ।

मोहसिन—अब यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन चौधरी साहब के काबू में बहुत से जिन्नात हैं। कोई चीज़ चोरी जाए, चौधरी साहब उसका पता लगा देंगे और चोर का नाम भी बता देंगे। जुमेराती का बछड़ा उस दिन खो गया था। तीन दिन हैरान हुए कहीं न मिला। तब झख मार कर चौधरी के पास गए। चौधरी ने तुरन्त बता दिया, मवेशीखाने में है और वहीं मिला। जिन्नात आ कर उन्हें सारे जहान की खबरें दे जाते हैं।

अब उसकी समझ में आ गया कि चौधरी के पास क्यों इतना धन है, और क्यों उनका सम्मान है।

आगे चले। यह पुलिस लाइन है। यहीं सब कानिस्टेबल कवायद करते हैं। रैटन! फाय फो! रात को बेचारे घूम-घूम कर पहरा देते हैं, नहीं चोरियां हो जाएँ। मोहसिन ने प्रतिवाद किया—यह कानिस्टेबल पहरा देते हैं। तभी तुम बहुत जानते हो। अजी हजरत यही चोरी कराते हैं। शहर के जितने चोर डाकू हैं, सब इनसे मिले रहते हैं। रात को ये लोग चोरों से तो कहते

हैं, चोरी करो आप दूसरे मुहल्ले में जा कर 'जागते रहो !' जागते रहो !' पुकारते हैं। जभी इन लोगों के पास इतने रुपए आते हैं। मेरे मामू एक थाने में कानसटिबल हैं। बीस रुपये महीना पाते हैं लेकिन ५०) महीना घर भेजते हैं। अल्लाह कसम। मैंने एक बार पूछा था कि मामू, आप इतने रुपये कहाँ से पाते हैं ? हँस कर कहने लगे-बेटा, अल्लाह देता है। फिर आप ही बोले—हम लोग चाहें तो एक दिन में लाखों मार लाएँ। हम तो इतना ही लेते हैं; जिसमें अपनी बदनामी न हो और नौकरी न चली जाए।

हामिद ने पूछा—ये लोग चोरी करवाते हैं, तो कोई इन्हें पकड़ता नहीं ?

मोहसिन—उनकी नादानी पर दया दिखा कर बोला—अरे पागल; इन्हें कौन पकड़ेगा ? पकड़ने वाले तो ये लोग खुद हैं: लेकिन अल्लाह इन्हें सज़ा भी खूब देता है। हराम का माल हराम में जाता है। थोड़े ही दिन हुए मामू के घर में आग लग गई। सारी लेई-पूँजी जल गई। एक बर्तन तक न बचा। कई दिन पेड़ के नीचे सोए, अल्लाह कसम पेड़ के नीचे। फिर न जाने कहाँ से एक सौ कर्ज लाये तो बरतन-भाण्डे आए।

हामिद—एक सौ तो पचास से ज्यादा होते हैं ?

'कहाँ पचास, कहाँ एक सौ। पचास एक थैली-भर होता है। सौ तो दो थैलियों में न आएँ।'

अब बस्ती घनी होने लगी थी। ईदगाह जाने वालों की टोलियाँ नज़र आने लगीं। एक-से एक भड़कीले वस्त्र पहने हुए।

कोई इक्के-ताँगे पर सवार, कोई मोटर पर, सभी इत्र में बसे, सभी के दिलों में उमंग, ग्रामीणों का यह छोटा सा दल, अपनी विपन्नता से बेखबर सन्तोष और धैर्य में मगन चला जा रहा था। बच्चों के लिए नगर की सभी चीजें अनोखी थीं। जिस चीज़ की ओर ताकते; ताकते ही रह जाते। और पीछे से बार बार हॉर्न की आवाज़ होने पर भी न चेतते। हामिद तो मोटर के नीचे जाते-जाते बचा।

सहसा ईदगाह नज़र आया। ऊपर इमली के घने वृक्षों की छाया है। नीचे पक्का फ़र्श है, जिस पर जाजिम बिछा हुआ है। और रोजेदारों की पंक्तियाँ एक के पीछे एक न जाने कहाँ तक चली गई हैं, पक्की जगत के नीचे तक, जहाँ जाजिम भी नहीं है। नए आने वाले पीछे की कतार में आ कर खड़े हो जाते हैं। आगे जगह नहीं है। यहाँ कोई धन और पद नहीं देखता। इस्लाम की निगाह में सब बराबर हैं। इन ग्रामीणों ने भी वजू किया और पिछली पंक्ति में खड़े हो गए। कितना सुन्दर संचालन है; कितनी सुन्दर व्यवस्था! लाखों सिर एक साथ सिज़दे में झुक जाते हैं। फिर सब-के-सब एक साथ खड़े हो जाते हैं। एक साथ झुकते हैं और एक साथ घुटनों के बल बैठ जाते हैं। कई बार यही क्रिया होती है। जैसे बिजली की लाखों बत्तियाँ एक साथ प्रदीप्त हों और एक साथ बुझ जाएँ और यही क्रम चलता रहे। कितना अपूर्व दृश्य था, जिसकी सामूहिक क्रियाएँ, विस्तार और अनन्तता हृदय को श्रद्धा, मन को गर्व और आतमा को आनन्द से भर देती थीं।

भ्रातृत्व का एक सूत्र इन समस्त आत्माओं को एक लड़ी में पिरोए हुए है।

नमाज़ खतम हो गई है। लोग आपस में गले मिल रहे हैं। तब मिठाई और खिलौनों की दुकानों पर धावा होता है। ग्रामीणों का यह दल इस विषय में बालकों से कम उत्साही नहीं है। यह देखो, हिण्डोला है। एक पैसा दे कर चढ़ जाओ। कभी आसमान पर जाते हुए मालूम होंगे, कभी ज़मीन पर गिरते हुए। यह चरखी है। लकड़ी के हाथी, घोड़े, ऊँट छड़ों से लटके हुए हैं। एक पैसा दे कर बैठ जाओ और पच्चीस चक्करों का मज़ा लो। महमूद और मोहसिन और नूरे और सफी इन घोड़ों और ऊँटों पर बैठते हैं। हामिद दूर खड़ा है। तीन ही पैसे तो उसके पास हैं। अपने कोष का एक तिहाई ज़रा-सा चक्कर खाने के लिए नहीं दे सकता।

सब चर्खियों से उतरते हैं। अब खिलौने लेंगे। इधर दुकानों की कतार लगी हुई है। तरह तरह के खिलौने हैं—सिपाही और गुज़रिया, राजा और वकील, भिश्ती और धोबिन और साधु। वाह! कितने सुन्दर खिलौने हैं। अब बोलना ही चाहते हैं। महमूद सिपाही लेता है, खाकी वर्दी और लाल पगड़ी वाला, कन्धे पर बँदूक रखे हुए मालूम होता है, अभी क़वायद किये चला आ रहा है। मोहसिन को भिश्ती पसन्द आया। कमर झुकी हुई है ऊपर मशक रखे हुए है। मशक का मुँह एक हाथ से पकड़े हुए है। कितना प्रसन्न है! शायद कोई

गीत गा रहा है। बस मशक से पानी उँडेला ही चाहता है। नूरे को वकील से प्रेम है। कैसी विद्वत्ता है! उनके मुख पर, काला चोगा, नीचे सफेद अचकन, अचकन की सामने की जेब में घड़ी, सुनहरी जंजीर, एक हाथ में कानून का पोथा लिए हुए। मालूम होता है, अभी किसी अदालत से जिरह या बहस किए चले आ रहे हैं। ये सब दो-दो पैसे के खिलौने हैं। हामिद के पास कुल तीन पैसे हैं, इतने महंगे खिलौने वह कैसे ले? खिलौना कहीं हाथ से छूट पड़े, तो चूर-चूर हो जाए। ज़रा पानी पड़े तो सारा रंग धुल जाए। ऐसे खिलौने ले कर वह क्या करेगा! किस काम के!

मोहसिन कहता है—मेरा भिश्ती रोज़ पानी दे जायगा; साँझ सवेरे।

महमूद—और मेरा सिपाही घर का पहरा देगा। कोई चोर आयगा, तो फौरन बन्दूक फैर कर देगा।

नूरे—और मेरा वकील खूब मुकदमा लड़ेगा।

सम्मी—और मेरी धोबिन रोज़ कपड़े धोयगी!

हामिद खिलौनों की निन्दा करता है—मिट्टी के तो हैं, गिरें तो चकनाचूर हो जाएँ; लेकिन ललचाई हुई आँखों से खिलौनों को देख रहा है और चाहता है कि ज़रा देर के लिए उन्हें हाथ में ले सकता। उसके हाथ अनायास ही लपकते हैं; लेकिन लड़के इतने त्यागी नहीं होते, विशेषकर जब अभी नया शौक़ है। हामिद ललचाता रह जाता है।

खिलौनों के बाद मिठाइयाँ आती हैं। किसीने रेवड़ियाँ ली हैं, किसीने गुलाब जामुन, किसीने सोहनहलवा। मजे से खा रहे हैं। हामिद बिरादरी से पृथक् है। अभागे के पास तीन पैसे हैं। क्यों नहीं कुछ ले कर खाता? ललचायी आँखों से सबकी ओर देखता है।

मोहसिन कहता-हामिद, रेउड़ी ले जा, कितनी खुशबूदार हैं!

हामिद को सन्देह हुआ, यह केवल क्रूर विनोद है, मोहसिन इतना उदार नहीं है; लेकिन यह जान कर भी उसके पास जाता है। मोहसिन दोने से एक रेवड़ी निकाल कर हामिद की ओर बढ़ाता है। हामिद हाथ फैलाता है। मोहसिन रेवड़ी अपने मुँह में रख लेता है।

महमूद, नूरे और सम्मी खूब तालियाँ बजा-बजा कर हँसते हैं। हामिद खिसिया जाता है।

मोहसिन—अच्छा, अबकी ज़रूर देंगे हामिद, अल्ला कसम, लें जा।

हामिद—रखे रहो। क्या मेरे पास पैसे नहीं हैं?

सम्मी—तीन ही पैसे तो हैं, तीन पैसे में क्या-क्या लोगे?

महमूद—हमसे गुलाबजामुन ले जाओ हामिद, मोहसिन बदमाश है!

हामिद—मिठाई कौन बड़ी नेमत है। किताब में इसकी कितनी बुराइयाँ लिखी हैं।

मोहसिन—लेकिन दिल में कह रहे होंगे कि मिले तो खा लें। अपने पैसे क्यों नहीं निकालते?

× × ×

खुतबा पढ़ कर लोग गाँव में लौटे। अब मियाँ हामिद का हाल सुनिये। अमीना उसकी आवाज़ सुनते ही दौड़ी और उसे गोद में उठा कर प्यार करने लगी। सहसा उसके हाथ में चिमटा देख कर वह चौंकी।

'यह चिमटा कहाँ था?'

'मैंने मोल लिया है।'

'कै पैसे में?'

'तीन पैसे दिये।'

अमीना ने छाती पीट ली। यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पिया। लाया क्या, चिमटा। सारे मेले में तुझे और कोई चीज़ न मिली, जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया?

हामिद ने अपराधी-भाव से कहा—तुम्हारी उँगलियाँ तवे से जल जाती थीं; इसलिए मैंने लिया।

बुढ़िया का क्रोध तुरन्त स्नेह में बदल गया और स्नेह भी वह नहीं, जो प्रगल्भ होता है और अपनी सारी कसक शब्दों में बिखेर देता है। यह मूक स्नेह था, खूब ठोस, रस और स्वाद से भरा हुआ। बच्चे में कितना त्याग, कितना सद्भाव और कितना विवेक है! दूसरों को खिलौने लेते और मिठाई खाते

देख कर इसका मन कितना ललचाया होगा। इतना ज़ब्त इससे हुआ कैसे ? वहाँ भी इसे अपनी बुढ़िया दादी की याद बनी रही। अमीना का मन गद्गद हो गया।

और एक विचित्र बात हुई। हामिद के इस चिमटे से भी विचित्र। बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पार्ट खेला था। बुढ़िया अमीना बालिका अमीना बन गई। वह रोने लगी। दामन फैला कर हामिद को दुआएँ देती जाती थी और आँसू की बड़ी-बड़ी बूँदें गिराती जाती थी। हामिद इसका रहस्य क्या समझता!

अभ्यास :-

१ वाक्य बनाइये—

सिज़दा, मनोहर, बधाई, नियामत, निगोड़ी, चितवन, कचोटना, सलामत, सम्मान, लेई-पूँजी, उमंग, विपन्नता, वज़ू, मूक।

२ निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ समझाइये—

ईद का मुहर्रम होना, आंखें बदलना, राई का पर्वत बनाना, उल्लू बनाना, तीन कौड़ी के।

३ कहानी में आपको कौन-सा लड़का अधिक पसन्द है और क्यों?

विद्युत्

विद्युत् शक्ति ने संसार की काया पलट कर दी है। जब से मनुष्य के हाथ में यह शक्ति आई है वह इस शक्ति के सहारे नित नये आविष्कार करता जा रहा है। इन आविष्कारों को देख-देख कर साधारण मनुष्य चकित रह जाता है। बम्बई और पूना के बीच रात दिन लम्बी-लम्बी गाड़ियों को दौड़ाने का काम कौन करती है? यही विद्युत् शक्ति। और इस विद्युत् शक्ति से छोटे-से छोटा काम भी लिया जा सकता है। बिजली आपके घर को प्रकाशित ही नहीं करती, वह कपड़ों पर लोहा कर सकती है, उस्तरे से हजामत कर सकती है, पानी गरम कर सकती है। पंखा चलाना और घंटी बजाना तो उसका मामूली काम है। घर में बुहारी लगाने से रसोई बनाने तक का काम बिजली के सहारे किया जा सकता है।

धनी लोग रात में सोने से पहले अपनी तिजोरी के पास आल्टा-वायलट नामक विद्युत् शक्ति को खुला छोड़ देते हैं, घर भर में अँधेरा रहता है, चोर इस अन्धकार में चुपचाप तिजोरी के पास आता है, किन्तु उसकी प्रतिछाया पड़ते ही यह शक्ति पुलिस के थाने या मकान मालिक के पास जोर से घंटी

बजाने लगती है। आजकल बिजली के जरिये से ओढ़ने का लिहाफ़ और पहनने का कोट भी गरम किया जा सकता है और इस तरह कड़ी-से-कड़ी सर्दी में भी आसानी से बचा जा सकता है। बिजली के कारण ही ऐक्स-रे का आविष्कार संभव हुआ जिसके सहारे हम शरीर के भीतरी हिस्सों का चित्र ले कर रोग का पता चला सकते हैं। बिजली के सहारे ही हमारा रेडियो चलता है। और हम हज़ारों मील दूर की आवाज़ क्षण भर में सुन लेते हैं। हम बहुत शीघ्र हज़ारों मील के दृश्यों और व्यक्तियों को इसी बिजली के सहारे अपने सामने देख सकेंगे।

कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य की उन्नति इस बिजली पर ही निर्भर है। इसके अभाव में न तो बड़े-बड़े कारखाने चलते हैं और न हमारे घरों और मार्गों पर प्रकाश ही हो सकता है।

आखिर इतनी शक्तिशाली वस्तु का आविष्कार कैसे हुआ? आविष्कार की प्रणाली देखने में बहुत साधारण-सी है किन्तु उसका परिणाम देख कर आश्चर्य होता है।

यदि आप अपनी हथेलियों को आपस में घिसें तो कुछ क्षण बाद ही दोनों हथेलियाँ गरम हो जायँगी। आज से हज़ारों साल पहले लोग इस घर्षणशक्ति से परिचित हो चुके थे। दो चीजों को घिसने से ताप या गर्मी उत्पन्न होती है यह जान लेने के बाद एक बात और ध्यान में आई कि घर्षण के बाद वस्तु में आकर्षण शक्ति उत्पन्न हो जाती है। आप लोग इस बात का प्रयोग मयूर-पंख पर कर सकते हैं। मयूर-पंख को लगातार रगड़ कर यदि

हम इसे अपने हाथ के निकट लाएँ तो वह स्वयं ही हमारे हाथ की ओर आकर्षित होगा। फाउण्टेनपेन की पत्ती को यदि ऊनी कपड़े पर रगड़ा जाय तो कुछ ही देर में वह पत्ती कागज के छोटे-छोटे टुकड़ों को उठाने लगेगी। इसी तरह का प्रयोग अन्यत्र भी देखा जा सकता है।

धीरे-धीरे लोगों के ध्यान में यह बात आ गई कि घर्षण से केवल ताप ही नहीं आर्षकण शक्ति भी अुत्पन्न होती है। जिस चीज़ को रगड़ा जाता है अुसमें विद्युत् शक्ति का सञ्चार हो जाता है और इस सञ्चार के कारण ही उसमें आकर्षण के साथ-साथ अपनी विरोधी शक्ति को परे फेंकने की सामर्थ्य भी आ जाती है। इसे हम एक प्रकार की विकर्षण शक्ति कह सकते हैं। इसी को आगे चल कर धनात्मक और ऋणात्मक शक्तियों का नाम दिया गया।

सैकड़ों वर्षों तक इन शक्तियों से परिचित रहने पर भी लोगों ने इनका अधिक उपयोग नहीं किया। सोलहवीं शती में डॉक्टर गिलबर्ट ने इस बारे में बहुत दिलचस्पी ली। उन्होंने अनेक सिद्धान्त स्थिर किये और फिर तो बहुत-से ऐसे वैज्ञानिक हुए जिन्होंने विद्युत् शक्ति के आविष्कार में अपना जीवन लगा दिया। बड़े-बड़े यन्त्र बने।

कुछ चीजें ऐसी हैं जो शीघ्र ही ताप तथा आकर्षण-विकर्षण शक्तियों को ग्रहण कर लेती हैं जैसे लोहा, ताँबा आदि किन्तु कुछ चीजें ऐसी हैं जो अुसे इस तरह ग्रहण नहीं करतीं

जैसे ग्लास, चीनी मिट्टी आदि

एक बड़ी कठिनाई यह थी कि ये आर्षकण, विर्षकण दोनों एक स्थान पर नहीं रह सकते और दोनों के समन्वय के बिना हमारे हाथ में शक्ति नहीं आ सकती, बहुत परिश्रम के बाद वैज्ञानिकों ने इन दोनों शक्तियों को पृथक् पृथक् संगृहीत करके उनका उपयोग करना शुरू किया। आप लोग देखते होंगे बिजली के तार हमेशा दुहरे होते हैं। घर्षण से उत्पन्न होनेवाले ताप तथा आकर्षण-विकर्षण को जमा किया जाता है और फिर यह संचित शक्ति पतले-पतले तारों द्वारा दूर-दूर तक पहुँचाई जाती है।

घर्षण करने के दो साधन हैं। ऊपर से पड़नेवाले पानी से इस प्रकार की शक्ति ग्रहण कर ली जाती है या फिर कोयला आदि के सहारे घर्षण उत्पन्न किया जाता है। हमारे देश में अनेक नदियाँ और प्रपात हैं जो प्रतिक्षण बड़े वेग से ऊपर से नीचे बहते रहते हैं। जल-प्रवाहों से बिजली प्राप्त करने में सुविधा होती है और खर्च भी कम होता है। मैसूर तथा बम्बई के पास खण्डाला-घाट में इसी तरह जल-प्रपात से बिजली उत्पन्न की जाती है। भारत के स्वतन्त्र होने के बाद इसी तरह के बहुत-से बाँध कई स्थानों पर बनाये जा रहे । हाँ जल से बिजली उत्पन्न की जा सके। हैदराबाद में तुंगभद्रा तथा निजाम सागर के बाँधों पर इसी तरह विद्युत् पैदा की जायगी। लेकिन अब भी हमारे देश में बिजली का अधिकांश उत्पादन

कोयले से होता है। इसी कारण बिजली मँहगी पड़ती है।

बिजली की शक्ति को मापने के लिए जो इकाई बनाई गई है उसे अश्वबल कहते हैं। हमारे जल-प्रपातों से साठ लाख अश्वबल की विद्युत् आसानी से प्राप्त हो सकती है जिसमें से हम केवल सात लाख अश्वबल की शक्ति का ही उपभोग करते हैं। यदि हम अपने समस्त साधनों को काम में लायँ तो भारत के छोटे-छोटे गाँवों में भी बिज़ली पहुँचाई जा सकती है। वैसी स्थिति में हमारे गाँवों का कैसा रूप होगा इसकी कल्पना सहज ही में की जा सकती है।

अभ्यास :—

१. घर्षण और आकर्षण शक्ति का परिचय कैसे प्राप्त हुआ ?

२. बिजली के उत्पादन का कौन-सा तरीका अधिक सुलभ और लाभदायक है ?

३. बिजली की उपयोगिता के सम्बन्ध में कम-से-कम तीस पंक्तियों का निबन्ध लिखिये।

माताजी की स्मृति में

२६ जून।

मैं कुछ लिख रहा था कि तारवाले ने पुकारा—"तार।" जब तार के आने की कहीं से आशा नहीं होती तो तार का आना प्रायः निरभ्र आकाश से विद्युत्पात के समान होता है। फिर भी मैंने तार खोला और जो कुछ उसमें पढ़ा, उसके लिए मैं बिल्कुल तैयार न था। लिखा था – "माताजी का आज स्वर्ग-वास हो गया।"

माताजी लगभग ८५ वर्ष की थीं तीन वर्ष पूर्व उनके पाँवों, हाथों और मुख के कुछ हिस्सों में पक्षाघात हो गया था। आँखों से सर्वथा लाचार थीं। प्रतिदिन यदि वे किसी का रास्ता देख रही थीं तो मृत्यु का। इसके लिये उन्होंने न जाने कितने वर्षों से तैयारी कर रक्खी थी। ज़रा-सी भी बीमार होतीं तो समझतीं कि बुलावा आ पहुँचा है और वे 'महायात्रा' के लिए उद्यत हो जातीं। कहती थीं—"अब न मुझे खाने-पीने की इच्छा है और न पहनने की। बस, इतनी ही चाह है कि जितने दिन जिऊँ, कभी किसी की मुहताज न होऊँ।" और वे इसके लिए भगवान् से हमेशा प्रार्थना करती थीं :—

"पैदा किए की लाज,
कभी न कर मुहताज।"

उनके जीवन का अधिकांश भाग प्रार्थना में ही व्यतीत होता था। वस्तुतः यह 'प्रार्थना' ही उनके जीवन का सहारा थी। यद्यपि वे बिल्कुल अनपढ़ थीं और उनके लिए काला अक्षर भैंस बराबर था तो भी उन्हें न जाने प्रार्थना के कितने गीत और भजन कण्ठस्थ थे। उनमें से कई गीत हमें साधारण-से प्रतीत होते थे। हम उनसे कहते थे—"यह क्या भजन तुमने याद कर लिया है, अम्मा? उत्तर में वे कहतीं' "मैं कोई पढ़ी-लिखी हूँ? इसकी अच्छाई बुराई तो तुम जानो। मेरे लिए तो इसमें भगवान् का नाम ही बहुत है।" उनका कण्ठ पतला और मधुर था। प्रातःकाल चार बजे चक्की पर बैठ जातीं और चक्की के चलने के साथ-साथ उनका गाना प्रारम्भ हो जाता। गाने-गाने में पहले सोए हुए कृष्ण को जगातीं, फिर दातुन करातीं। समस्त नित्य-कर्मों से निवृत्त कर उन्हें 'दूध-दही--माखन' खिलातीं और फिर उनकी लीला के गीत गातीं। चक्की का कार्य समाप्त हो जाने के बाद स्नान करतीं और फिर अपनी प्रार्थना में लग जातीं। वे अपनी प्रतिदिन की प्रार्थना में कहती थीं :—

"भगवान्, सब का भला कर।
हिन्दू–मुसलमान का भला कर।
राह चलते मुसाफ़िर का भला कर।
पहले सब का भला कर,

फिर मेरा भला कर ॥"

वे हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिए प्रार्थना करती थीं। मुझे यह देख कर आश्चर्य होता था कि एक अनढ़प सर्वथा पुराने विचारों की हिन्दू महिला प्रतिदिन अपनी प्रार्थना में मुसलमानों के भले के लिए प्रार्थना करती है! इसके बिना वे अन्न-ग्रहण नहीं करती थीं। प्रतिदिन तुलसी को अपने हाथों से पानी चढ़ाती थीं। कहती थीं—वृन्दावनी माता—सबके दुःख दूर करो।" तुलसी पर कई गीत गाती थीं और इसके बाद सूर्य की स्तुति करती थीं। अपनी प्रार्थना के अन्त में वे बार-बार कहती थीं :—

"पैदा किए की लाज,
कभी न कर मुहताज।"

मैं कभी सोचता था कि उनके गीतों को लिख लूँगा! उनके गीतों में बहुत जगह छन्दोभंग होता था, परन्तु वे अपने गाने में सब ठीक कर लेती थीं। गीतों को लिख लेने की इच्छा मन में ही रह गई। वे प्रायः सायंकाल अपनी बोली पश्चिमी पंजाबी में जैसे कुछ पुराण उन्हें कण्ठस्थ थे—उनका पाठ किया करती थीं। उसमें कभी किसी का सम्वाद होता था, कभी कंस की कथा और कभी कृष्ण की कोई अन्य लीला। पुराणों की कथाएँ सुनने की बहुत शौकीन थीं।

बूढ़ी थीं, इसलिए वे सबको आशीर्वाद देती थीं और कई बार वे ऐसे शब्दों में आशीर्वाद देती थीं कि जिन्होंने उस आशीर्वाद को सुना, उन्होंने उसे कभी न भुलाया। विधवा

नवयुवतियों को आशीर्वाद देती थीं :—

"द्रौपदी दे पल्लोनाल कज्जी रहो !"

(हमेशा द्रौपदी के आँचल से ढकी रहो।)

सुहागिनों से कहतीं :—

"वध-फल होवें।
सत्पुत्रेती थीवें।
बुढ़-सुहागन होवें।"

(फूलो-फलो, सौ पुत्रोंवाली होओ, बुढ़ापे तक सुहागिन रहो।)

मुझे ऐसा याद पड़ता है कि लाहौर में उन्होंने एक सुशिक्षित सम्भ्रान्त महिला को, जिसका विवाह उसी समय में हुआ था, आशीर्वाद दिया—"सौ बेटोंवाली हो।" वह नवयुवती घबरा कर कहने लगी—"माताजी, आजकल के दिनों में यह आशीर्वाद मत दीजिए। गान्धारी ही अपने सौ बेटों को पाल सकती थी। आजकल सौ बेटे हो जाएँ तो उनका पालन पोषण किस प्रकार होगा ?" उत्तर में उन्होंने कहा—"जो भगवान् तुम्हें सौ बेटे देगा, वह उनकी देख रेख का भी इन्तज़ाम कर देगा।"

लड़कियों को हमेशा उपदेश देती थीं—"कभी अपना समय मत गँवाओ। कुछ-न-कुछ काम करती रहो। घर के किसी भी काम को छोटा और निकम्मा मत समझो। कभी नौकरों पर अपने काम को मत छोड़ो।" वे कहा करती थीं—"जिसके घर में चक्की-चरखा नहीं चलते और चूल्हा नहीं जलता—वह घर,

घर ही नहीं है।" दुपहर को खाना खा कर वे नियमपूर्वक चरखा चलाया करती थीं। यद्यपि वे जो सूत कातती थीं, मोटा होता था; परन्तु उनका हाथ चरखे पर मशीन जैसा चलता था। हाथों पर पक्षाघात का असर हो जाने के बाद भी वे कातने का प्रयत्न करती थीं। कहती थीं कि शायद इसी प्रकार मेरा हाथ काम करने लग जाय। जब तक वे सर्वथा लाचार नहीं हो गईं, उन्होंने अपना चरखा नहीं छोड़ा। घर के प्रत्येक कार्य को बड़े शौक और दिल से करती थीं। घर लीपना, बर्तन माँजना, कपड़े धोना, छाछ बिलोना—उन्हें कोई भी घर का काम हलका या छोटा नहीं प्रतीत होता था। अधिक बातचीत, हँसी-मज़ाक उन्हें पसन्द नहीं था। वे स्त्री-जाति के कष्टों से भलीभाँति परिचित थीं। बातचीत में दुःखी हो कर कहती थीं—"भगवान् स्त्री का जन्म न दे।" उन्हें विश्वास ही नहीं होता था कि स्त्री-जाति की अवस्था में कुछ सुधार हो सकता है। फ़ैशन के सुधारों से वे बहुत चिढ़ती थीं और उनकी तीव्र आलोचना करती थीं।

अंग्रेज़ी शब्दों को वे ठीक तरह नहीं बोल पाती थीं और हम सब लोग जब उनसे कुछ परिहास करना होता था, पूछते थे—"अम्मा, तुम्हारा बड़ा पोता क्या काम करता है ?" उनका बड़ा पोता ओवरसियर है। वे बिल्कुल स्वाभाविक रीति से कहती थीं "अव्वल सुअर है।" हम कहते थे, अव्वल सुअर नहीं, ओवरसियर।" वे फिर 'अव्वल सुअर' कहती थीं और हम

सब खिलखिला कर हँस पड़ते थे। वे आखिर तक 'ओवरसियर' को 'अव्वल सुअर' ही कहती रहीं! 'टमाटर' को 'मनाटर' 'थर्मामीटर' को 'सियामिण्टर', 'रेडियो' को 'रेजुआ' और 'प्रोफ़ेसर' को 'सफेशर' कहती थीं। ऐसे ही और भी बहुत-से शब्द थे, जिनका वे विचित्र रीति से उच्चारण करती थीं। उनसे जब हम शुद्ध बुलवाने का प्रयत्न करते तो वे कह देती थीं कि मैं तो ऐसा ही बोल सकती हूँ। उन्हें अपने इस प्रकार बोलने पर हँसी नहीं आती थी।

उन्हें अभिमान छू तक नहीं गया था। कहती थीं, "हमेशा दूसरों से अच्छी तरह बोलो और मीठा व्यवहार करो। हर एक से पास हो कर भी दूर रहो। अपने हाथ पैर और मन सदा अच्छे काम में लगाए रक्खो। आलसी होना सबसे बड़ा पाप है। हमेशा अपना और अपने भगवान् का सहारा ढूँढ़ो। किसी पर आश्रित मत हो।" कहती थीं—"पत्थर तभी तक भारी नहीं पड़ता जब तक किसी दरवाज़े के पास नहीं गया।" उन्होंने अपने जीवन के इसी सिद्धांत पर पूर्ण आचरण किया और कभी अपने बेटों या पोते-पोती के घर में रहना पसन्द नहीं किया। अपने लिए कभी वे हम से कुछ नहीं माँगती थीं। कभी कुछ लेतीं तो किसी धर्म-कार्य के लिए। अगर हमने कभी उन्हें कुछ जबरन भेज भी दिया तो उससे अधिक ही हमें कुछ-न-कुछ वापस भेज देती थीं। वे अपने पतिगृह में ही पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ अपने विचारों के अनुरूप जीवन व्यतीत करना चाहती थीं।

इसी कारण वे अधिकतर अपने ही घर पर रहीं और वहीं उनका स्वर्गवास हुआ। उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि वे वहाँ अकेली रहेंगी। उन्हें इस बात की भी चिन्ता नहीं थी कि उनके पास कुछ पैसा नहीं है-या उन्हें कोई कष्ट है। वे अपनी स्वतन्त्रता न होने के कष्ट को सबसे बड़ा कष्ट समझती थीं। हमारे घरों में भी वे नहीं आना चाहती थीं, परन्तु यह चाहती थीं कि हम सब उनके घर जाएँ और वे हमें खिलाती-पिलाती रहें। यदि कभी वे हम लोगों के घर पर आईं तो हमारे काम से आईं इसलिए कभी नहीं आईं कि उन्हें किसी आश्रय की आवश्यकता थी। अपने पति की मृत्यु के बाद वे परमात्मा का आश्रय ग्रहण कर चुकी थीं और अन्त तक वे उसी के आश्रय में रहीं।

मरने से दो सप्ताह पूर्व उन्होंने एक पत्र भेजा था, जिसमें लिखवाया था—"तुम किसी बात की चिन्ता मत करना। चिन्ता करना मनुष्य का काम नहीं है। अपनी चिन्ताओं को भगवान् पर छोड़ दो। तुम केवल अपना कार्य किए जाओ।" पत्र में उन्होंने अपने स्वास्थ्य के विषय में कुछ नहीं लिखवाया था, यद्यपि मुझे बाद में ज्ञात हुआ कि उनका स्वास्थ्य उस समय अच्छा नहीं था। वे हमें किसी प्रकार का कष्ट नहीं देना चाहती थीं।

यही कारण है कि हम इतने भाग्यहीन रहे कि अन्त समय भी उनकी कोई सेवा न कर सके। उन्होंने हमें इसका अवसर ही नहीं दिया। आज मुझे जब उनकी बातें याद आती

हैं तो आँखें आँसुओं से भर आती हैं। काश हम उनकी कुछ सेवा कर पाते।

मृत्यु ! वृद्ध मनुष्य की मृत्यु अप्रत्याशित नहीं है यह वह आयु है, जिसमें मृत्यु का प्रेम और आनन्द के साथ आलिंगन किया जाता है, परन्तु अम्मा के चले जाने के बाद अब मुझे अनुभव होता है कि एक ऐसा हृदय जो हम से किसी प्रकार की आशा नहीं करता था और हमें हर समय कुछ-न-कुछ देना चाहता था, एक ऐसा हृदय जो हमारे कल्याण के लिए भगवान् से उठते-बैठते, सोते-जागते प्रति-क्षण प्रार्थना करता रहता था, एक ऐसा हृदय जिसमें हमारे लिए सद्भावना-ही-सद्भावना थी हमारे से सदा के लिए छिन गया है।

अभ्यास :—

१ अर्थ बताइये :—

अप्रत्याशित, आलिंगन, सद्भावना, सम्वाद, कण्ठस्थ, काला अक्षर भैंस बराबर।

नागरिकता

मनुष्य समाज में रहता है। वह समाज से अलग नहीं रह सकता। अलग रहना चाहे तब भी नहीं रह सकता। एक आदमी सभी काम नहीं कर सकता। एक अन्न पैदा करता है। दूसरा कपड़ा बनाता है। तीसरा हल तैयार करता तो चौथा मकान बनाता है। इस तरह सब के मेलजोल से जीवन चलता है। एक आदमी दूसरे का काम करता है। यदि एक आदमी दूसरे की सहायता न ले तो जीवन ही न चले।

हमारे लिए यह जरूरी है कि हम सोचें हमारा एक दूसरे के प्रति क्या कर्तव्य होना चाहिए। अगर हम केवल अपने लिए ही सोचते हैं तो दूसरों को हानि पहुँचेगी और घूम फिर कर इस हानि का फल हमें भी मिलेगा।

सोचिये आप के घर में झाड़-बुहार कर कचरा जमा किया गया। यदि आप कूड़े-कचरे को निश्चित जगह पर न डाल कर पड़ौसी के घर के सामने, गली या सड़क पर डाल देते हैं, तो आपको कुछ सुविधा मिल सकती है। समय बचता है। आराम मिलता है लेकिन इधर-उधर फेंके गए कूड़े करकट से जो बीमारियाँ फैलेंगी उससे आपको भी हानि पहुँच सकती है।

आपका पहला कर्त्तव्य है कि आप यह जान लें कि जिन लोगों में आप रहते हैं उनसे कैसा बर्त्ताव किया जाए।

हम जिस समाज में पैदा हुए हैं उस समाज पर हमारा बहुत अधिकार है। जिस घर में हम पैदा हुए हैं उस घर पर भी हमारा अधिकार है। जिस देश में हमने जन्म लिया है उस पर भी हमारा अधिकार है। हमारा यह अधिकार है कि माता-पिता हमें भोजन वस्त्र दें। अच्छी शिक्षा दिलाएँ। हम समाज से अपने अधिकारों की माँग कर सकते हैं कि वह हमें फलने-फूलने का अवसर दे। हम राज्य से अपने इस अधिकार की माँग करेंगे कि वह हमारी रक्षा करे, हमारे श्रम और बुद्धि का अच्छा उपयोग करे और हमें उन्नति के साधन प्रदान करे। किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इन अधिकारों के साथ-साथ हमें बहुत-से कर्त्तव्य भी करने हैं। घर, देश, समाज और राज्य हमसे कर्त्तव्य की आशा भी रखते हैं। माता-पिता चाहेंगे या उनका अधिकार है कि हम सदाचारी बनें। उनकी आज्ञा का पालन करें। उनसे अच्छा बर्ताव करें। देश पर जब आपत्ति आए तो हम अपना तन, मन, धन उस पर न्यौछावर कर दें। राज्य की आज्ञाओं का पालन करें और समाज को अपनी शक्ति से लाभ पहुँचाएँ।

हम यह देखते हैं कि लोग अधिकार तो चाहते हैं। लेकिन उसके साथ कर्त्तव्य नहीं करना चाहते। यह कैसे हो सकता है। हम यह देख भी चुके हैं कि अगर हमारे कुछ अधिकार हैं तो दूसरे लोगों के भी कुछ अधिकार हैं। यदि हम अपना कर्त्तव्य

पालन नहीं करेंगे तो दूसरा आदमी अपना कर्त्तव्य क्यों पालेगा ? यदि हम माता-पिता की सेवा न करें और उनके अधिकारों को पूरा न करें तो वे लोग अपना कर्त्तव्य पालते हुए हमारा लालन-पालन क्यों करेंगे ?

हमें अपने कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए और साथ ही अधिकारों को पाने की कोशिश भी करनी चाहिए। यदि हम केवल कर्त्तव्य-पालन में ही लगे रहें तो हो सकता है हमारे अधिकार छीन लिए जाएँ, यह भी कोई अच्छी बात नहीं है। स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। अपने विचारों को लिख कर या बोल कर प्रकट करने का हमारा अधिकार है जिससे कि अपनी शक्ति और बुद्धि के अनुसार हम उन्नति कर सकें। यदि कोई हमारे इन अधिकारों का हरण करता है तो हम पूरी शक्ति लगा कर उन्हें प्राप्त करेंगे।

अपने अधिकार और कर्त्तव्य की जानकारी प्राप्त करना बहुत आवश्यक है। इस जानकारी के बिना हमारा काम अच्छी तरह नहीं चल सकता।

कर्त्तव्य के बारे में कई बार बड़ी कठिनाई होती है। एक ही समय में हमारे सामने कई कर्त्तव्य आ जाते हैं। आप छात्र-संघ के मन्त्री हैं, छात्र-संघ के उत्सव में आपका रहना ज़रूरी है, जिस समय उत्सव होने वाला है उसी समय आपके चचेरे भाई का विवाह है, उसमें भी आपको शामिल होना चाहिए, जब विवाह होने वाला है उसी समय आपके पड़ोसमें

कोई सख्त बीमार हो जाता है। उस बीमार की सहायता करना भी आपका कर्त्तव्य है। अब आप ही निश्चय कीजिये कि आप कौन-सा काम करेंगे। ऐसे अवसर पर ठीक कर्त्तव्य का चुन लेना बुद्धिमानी होगी।

कर्त्तव्य या अधिकार के बारे में एक बात ध्यान में रखनी होगी। आप यह सोचिये कि आपके किसी कर्त्तव्य से एक आदमी को लाभ पहुँच कर बहुतों को हानि तो नहीं पहुँच रही है! यदि आपके किसी अधिकार से आपको तो लाभ पहुँचता है लेकिन बहुतों को कष्ट होता है तो आप उस अधिकार और कर्त्तव्य को छोड़ दीजिये।

आप सड़क के बीचों बीच चलते हैं। धीरे-धीरे चलते हैं। धीरे-धीरे चलना आपको पसंद है। सड़क पर चलने का आपको अधिकार भी है किन्तु आपके इस अधिकार से कितने लोगों को कष्ट होता है। कइयों को अपनी मोटर रोकनी पड़ेगी। कोई ज़रूरी काम से साइकल पर जा रहा है और आपको हटाने के लिए घण्टी बजा रहा है। हो सकता है आपसे टक्कर हो जाए जिससे आपको चोट आ जाए। ऐसी हालत में आपका सड़क पर खड़ा रहना या धीरे-धीरे चलना अनुचित माना जाएगा।

समाज में आपको किस तरह रहना चाहिए, आपका अधिकार क्या है? आपके कर्त्तव्य क्या हैं? किस समय किस अधिकार या कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए इन सब बातों की चर्चा जिस शास्त्र में होती है उसे नागरिक शास्त्र कहते हैं।

इन्हीं सब बातों को नागरिकता कहते हैं। समाज में उसी आदमी का आदर होता है जिसमें नागरिकता ज्यादा होती है।

अभ्यास :—

(१) अधिकार और कर्त्तव्य का आपस में क्या संबन्ध है ?

(२) नागरिकता किसे कहते हैं ?

आत्माभिमान

अच्छे आदमी का गुण है कि वह सब के साथ नम्रता का बर्ताव करे। कुछ लोग यह समझते हैं कि अकड़ कर चलने या ऐंठ कर चलने से आदमी का आदर बढ़ता है। बात ऐसी नहीं है। ऐसे लोगों को नीचा देखना पड़ता है। उन्हें परेशान होना पड़ता है, लोग चाहे मुँह पर कुछ न कहें, लेकिन पीठ पीछे उनकी बुराई होती है। लोग उनकी मज़ाक उड़ाते हैं।

लेकिन नम्रता का यह मतलब नहीं कि हम अपना आत्माभिमान भी छोड़ दें। झूठा घमंड या अभिमान बहुत बुरी चीज़ है। अपने को कभी जरूरत से ज्यादा बढ़ा कर समझ लेने से लाभ कुछ नहीं होता, हानि अवश्य होती है। इसी तरह अपनी शक्ति का कम अन्दाज़ा लगाना या अपने को बहुत छोटा मान लेना भी बहुत बुरा है। इससे हमारी उन्नति रुक जाती है और हम अपने लिए ही नहीं दूसरे के लिए भी बोझ बन जाते हैं। हमारी जितनी शक्ति है, हममें जितनी बुद्धि है उसके अनुसार अपने आपको समझना बुरी बात नहीं है। यदि हम अपनी शक्ति का उचित अनुमान नहीं लगाते तो यह हमारी ग़लती होगी।

बचपन से ही हमें आत्माभिमानी होना चाहिए। जिस

आदमी में आत्माभिमान नहीं होता, अपना अभिमान नहीं होता वह कभी उन्नति नहीं कर सकता। आत्माभिमानी पुरुष दूसरे पर अत्याचार नहीं करेगा लेकिन साथ ही दूसरे का अत्याचार सहन भी नहीं करेगा।

पशुओं तक में आत्माभिमान पाया जाता है। कुछ कुत्ते ऐसे होते हैं जो अपना अपमान सहन नहीं कर सकते। गाय, भैंस और दूसरे जानवरों में भी यह बात देखने को मिल सकती है। कुछ बच्चों में भी आत्माभिमान खूब रहता है। आत्माभिमानी बालक को कभी किसी बात के लिए कहना नहीं पड़ता। वह इस बात के लिए प्रयत्नशील रहता है कि उस से कोई खराब काम न हो जाय। वे अपना काम समय पर कर लेते हैं। यदि कभी उनसे ग़लती हो जाती है या काम पूरा नहीं होता तो संकेत भर काफ़ी होता है। यदि उनको दो-चार बातें कह दी जायँ तो उनका बहुत प्रभाव होता है। इन बातों से उनके हृदय को ठेस लगती है, वे प्रतिज्ञा कर लेते है कि फिर कभी ऐसा अवसर नहीं आने देंगे। ऐसे ही बालक आगे चलकर उन्नति करते हैं। इन बालकों पर छड़ी उठाने या क्रोध करने की जरूरत नहीं पड़ती।

इसके विपरीत बहुत-से बालक ऐसे होते हैं जिन्हें अपने आप का आदर करना नहीं आता। वे बिल्कुल मुंड हो जाते हैं। उन्हें कक्षा में खड़ा कर दीजिये, कक्षा से बाहर कर दीजिए, कुछ भी असर नहीं होगा। झिड़कियाँ खाना उनके लिए मामूली बात हो जाती है। जो लोग अपने अपमान से नहीं डरते, दंड को

कुछ नहीं मानते वे लोग उन्नति कैसे कर सकेंगे।

अगर हम अपना आदर स्वयं नहीं करेंगे तो दूसरे लोग हमारा आदर क्यों करने लगे? यदि हमारी आत्मा अपमान को सह सकती है तो दूसरे लोग हमारा अपमान क्यों नहीं करेंगे? क्षुद्र जीव-जन्तु अपमान सह लेते हैं इस लिए लोग उन्हें पैरों से कुचलते हैं, लेकिन शेर अपनी शक्ति को जानता है। लोग उसके साथ ऐसा बर्ताव नहीं कर सकते। क्या आग को कोई पाँव से कुचल सकता है?

आपका कहीं अपमान होता है तो उसका बदला आपको चुकाना ही चाहिए। यदि कोई आपके आत्माभिमान को ठेस पहुँचाय तो आपको चुप नहीं रहना चाहिए। यदि आप चुप रहते हैं तो उसका बुरा परिणाम केवल आपको ही नहीं, दूसरों को भी भुगतना पड़ता है। हाँ, आपको इस बात की चेष्टा करनी पड़ेगी कि कहीं यह आत्माभिमान मिथ्याभिमान में तो नहीं बदल रहा! आपका आत्माभिमान किसी को कष्ट तो नहीं पहुँचा रहा है?

अभ्यास :—

१ आत्माभिमान और घमण्ड में क्या अन्तर है!

२ आत्माभिमान हमारी उन्नति में किस तरह सहायक हो सकता है?

शब्दों का अर्थ बताइये—

३ मिथ्याभिमान, परिणाम, संकेत, पीठ-पीछे, अत्याचार।

गोदावरी

भारतवर्ष का राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा साहित्यिक इतिहास यहाँ की चिर प्रवाहित नदियों, दुर्गम पर्वतों तथा उसकी तलहटियों से अंकित है। उत्तर भारत के इतिहास को बनाने में जहाँ हिमालय की अगम ऊँचाई और खैबर की घाटी अपना प्रभाव डाल चुकी है वहाँ गंगा, यमुना, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र, शोण तथा सरयू की लहरों ने कई राज्यों का निर्माण किया। गंगा की असंख्य लहरें उसके किनारे पर बसे नगर, राजवंश तथा भारत के वैभव की गाथाएँ आज भी सुनाती हैं। आर्यों का प्रथम निवास इसी गंगा के किनारे हुआ। अनार्यों से प्रथम संघर्ष का साक्षी इसी का किनारा है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र ने भरद्वाज से विदा ले कर दक्षिण दिशा की ओर यहीं से प्रस्थान किया। उत्तर में इस गंगा मैय्या का जो स्थान है वही दक्षिण में गोदावरी को प्राप्त है। इसीलिए गोदावरी को दक्षिण में 'गंगा' कहते हैं।

गोदावरी का अर्थ है 'पानी देनेवाली' अथवा 'गाय देनेवाली।' तेलुगु भाषा में 'गोदे' का अर्थ है 'मर्यादा' या 'सीमा।' इस

दृष्टि से गोदावरी का तात्पर्य है दक्षिण और उत्तर को बाँटने वाली सीमा।

बम्बई और मनमाड़ लाइन के बीच नासिक स्टेशन है। नासिक से अठारह मील गोदावरी का उद्गम स्थान त्र्यंबकेश्वर है। त्र्यंबकेश्वर में आठ तालाब हैं जिनमें से एक का नाम गंगा-सर है। इस तालाब का पानी पहाड़ों के बीच से हो कर, शिला से बने गाय के मुख में से बूँद-बूँद झरता है। इसका पानी 'कुशावर्तकुण्ड' में जमा होता है। इस कुण्ड तक पहुँचने में लगभग (७००) सात सौ सीढ़ियाँ पार करनी पड़ती हैं। यहाँ एक छोटा-सा चबूतरा है। इसके पश्चिम में गोरखनाथ की प्रसिद्ध गुफ़ा है। भगवान् रामचन्द्रजी कभी यहाँ निवास कर चुके हैं। त्र्यंबकेश्वर में वर्ष भर में तीन यात्राएँ अथवा मेले भरते हैं। त्रिपुरी पूर्णिमा, महाशिवरात्रि तथा संत ज्ञानेश्वर के भाई निवृत्तिनाथ की पुण्यतिथि विशेषरूप से मनाई जाती हैं।

त्र्यंबकेश्वर से निकलने के बाद गोदावरी एक छोटी-सी नहर के रूप में नासिक पहुँचती है। यहाँ भगवान् रामचन्द्र ने अपने वनवास के समय पड़ाव डाला था। शूर्पणखा यहीं रामचन्द्र से मिली थी। कांचन-मृग तथा सीताहरण की स्मृति पञ्चवटी के रूप में आज भी विद्यमान है। आज भी वहाँ की लहरें तपस्वी लक्ष्मण की भ्रातृभक्ति का गुणगान करती हैं।

नासिक से निकल कर जब गोदावरी का प्रवेश हैदराबाद राज्य में होता है तो उसका पाट अधिक विस्तृत और गहरा

हो जाता है। गोदावरी ज्योंही 'पैठण' को छूकर आगे बढ़ती है उसकी चञ्चलता कम हो जाती है। पैठण का पुराना नाम 'प्रतिष्ठान' था। यह संतों की पुण्यभूमि, साहित्यिकों की लीला-भूमि तथा साम्राटों की वीर भूमि रही है। यह नगर ईसा से १३८ वर्ष पहले पुलमायी द्वितीय के समय आन्ध्रों की राजधानी था। फिर सम्राट् शालिवाहन के समय पैठन का पुनरुत्थान हुआ। मराठी साहित्य के संत और कवि एकनाथ इसी पैठन के निवासी थे।

लगभग सौ मील तक आग्नेय दिशा में प्रवाहित होने के पश्चात् गोदावरी नांदेड़ पहुँचती है। यहाँ पर उसका पाट चौड़ा है लेकिन गहराई नहीं है। यहाँ पहले चालुक्य और बाद में यादवों का राज्य था। शाहजहाँ से पहले 'नांदेड़' में तेलंगाने की राजधानी थी। यहाँ पर सिखों का "गुरुद्वारा" है। सिखों के दसवें गुरु गोविन्दसिंह का देहान्त यहीं हुआ था। सिखों का स्वर्ण मन्दिर भारत के प्रसिद्ध दर्शनीय भवनों में से एक है। बन्दा वैरागी ने यहीं तपस्या की थी।

नांदेड़ से गोदावरी फिर उत्तर-पूर्व की ओर प्रवाहित होती है। वह १७६ मील तक हैदराबाद और मध्यप्रदेश की सीमा का काम देती है। इसके बाद उसका प्रवेश मद्रास राज्य में होता है। हैदराबाद और मद्रास के बीच एक अन्य महत्वपूर्ण स्थान है—भद्राचलम। यहाँ गोदावरी पहाड़ों से घिरी हुई है। पहाड़ी घाटी के कारण उसका पाट अधिक चौड़ा नहीं है

किन्तु उसमें गहराई खूब है। आन्ध्र के प्रसिद्ध संत 'रामदास' यहीं के रहने वाले थे। सोलहवीं शती में कुतुबशाही वंश के एक राजा ने संत रामदास को गोलकुण्डा में बारह वर्ष तक बंदी रखा था। रामदास रामभक्त थे। इन्होंने देवालय भद्राचलम में रामचन्द्रजी का देवालय बनवाया था। यहाँ प्रतिवर्ष रामनवमी के अवसर पर लाखों यात्री दर्शन करने जाते हैं। भद्राचलम तक पहुँचते-पहुँचते दर्जन से अधिक छोटी-बड़ी नदियाँ गोदावरी में मिल जाती हैं।

गोदावरी के किनारे पर राजमहेन्द्री नगर बसा है। इस शहर की स्थापना चालुक्य और ओरिसा राजाओं ने की। पहले यह 'चोल' और बादमें 'वरंगल' के राजाओं के अधीन रहा। पन्द्रहवीं शती में बहमनी वंश के महम्मदशाह द्वितीय ने इसको अपने राज्य में मिला लिया। सोहलवीं शती में इस पर विजयनगर का आधिपत्य हुआ। १५७४ से १७५७ तक इस पर फ्रान्स का शासन था। बाद में अंग्रेज़ों ने अधिकार किया।

राजमहेन्द्री पहुँचने के बाद गोदावरी की दो शाखाए हो जाती हैं—गौतमी और वसिष्ठा। इन्हीं दो शाखाओं से अलग-अलग सात धाराएँ बनती हैं जो समुद्र में मिल जाती हैं। राज-महेन्द्री पर रेल का बहुत बड़ा पुल है जो डेढ़ मील से अधिक लम्बा है। बारह वर्ष में एक बार वहाँपर बहुत बड़ा उत्सव होता है जो पुष्कर-उत्सव कहलाता है। इस अवसर पर भारत भर के यात्री जमा होते हैं। कुछ लोग गोदावरी की परिक्रमा

करते हैं।

अभ्यास :—

(१) नासिक, पैठण और भद्राचलम् के बारे में आप क्या जानते हैं।

(२) गोदावरी को दक्षिण की गंगा क्यों कहते हैं ?

अर्जुन कर्ण संवाद

अर्जुन—कर्ण ! तुम मुझसे लड़ना चाहते हो ?

कर्ण—हाँ, मैं तुमसे लड़ना चाहता हूँ। बस मैं संसार में एक ही आदमी से लड़ना चाहता हूँ। और वह तुम हो।

अर्जुन—तुम क्या लड़ोगे मुझसे ! मैं क्षत्रिय का पुत्र और तुम...

कर्ण—हाँ मैं सूत पुत्र हूँ। रथ चलाने वाले का बेटा हूँ।

अर्जुन—तो रथ चलाओ कर्ण ! बनोगे सारथी !

कर्ण—क्या सारथी का बेटा सारथी ही बन सकता है ? क्या वह रथी नहीं बन सकता ?

अर्जुन—रथी बनना चाहते हैं ? रथी बनने के लिए क्षत्रिय-कुल में पैदा होना पड़ता है।

कर्ण—मैं तो समझता हूँ रथी बनने के लिए भुजाओं में बल चाहिए।

अर्जुन—क्षत्रियों की भुजाओं में ही तो बल रहता है।

कर्ण—क्यों, सूत-पुत्र की भुजाओं में बल नहीं रहता ? अर्जुन, क्षत्रिय हो या ब्राह्मण, किसी कुल में जन्म देने का अधिकार भगवान का हो सकता है, किन्तु पराक्रम करने का अधिकार तो मेरे हाथ में है।

अर्जुन—पराक्रम करने का अधिकार हाथ में है ?

कर्ण—तो क्या पराक्रम करने का ठेका तुमने या तुम्हारे चंद्रवंश ने ले रखा है ?

अर्जुन—यही तो मैं बताना चाहता था। इसे समझो और चले जाओ। एक सूत-पुत्र से युद्ध करके मैं कलंकित नहीं होना चाहता हूँ।

कर्ण—किसी कुल को नीच न समझो अर्जुन ! बल, बुद्धि, पराक्रम पर किसी विशेष जाति या वंश का ठेका नहीं हो सकता। ये चीजें किसी को भी मिल सकती हैं।

अर्जुन—मिल सकती हैं ? मिल सकती हैं तो तुम भी ले लो।

कर्ण—मुझे कहीं लेने नहीं जाना है। मेरी माता राधा के दूध के साथ मैंने शक्ति पाई है। माता राधा के दूध की लाज मैं अच्छी तरह बचा सकता हूँ !

अर्जुन—तो क्या माता कुन्ती का दूध ही निर्वीर्य है ?

कर्ण—मैंने यह कहाँ कहा ? उनका दूध भी बलशाली हो सकता है।

अर्जुन—तो फिर तुम आज उसका प्रभाव देख लो।

कर्ण—हाँ, मैं आज उसीका प्रभाव देखने आया हूँ।

अर्जुन—फिर उठाओ तलवार ! बातें बनाना बन्द करो !

कर्ण—मेरी तलवार तैयार है। बातें बनाना सारथी-पुत्र का काम नहीं, यह आप जैसे क्षत्रिय-कुमारों को शोभा देता है। तुम्हींने लड़ने की अपेक्षा बातों से प्रभाव डालना चाहा।

आज मैं संसार को दिखा दूँगा कि केवल ऊँचे कुल में उत्पन्न होने से ही कोई आदमी वीर नहीं बन सकता है! छोटे कुल में उत्पन्न हो कर भी मनुष्य बड़े-बड़े काम कर सकता है।

अभ्यास :—

अर्जुन कर्ण से क्यों नहीं लड़ना चाहता था?

कर्ण ने अर्जुन को किस तरह निरुत्तर किया?

हमारा पड़ोसी तिब्बत

आप लोगों ने भारत का मानचित्र अवश्य देखा होगा। इस मानचित्र में आप ध्यान से देखें तो उत्तर की ओर हिमालय की लम्बी श्रृंखला दिखाई देगी। हिमालय की श्रृंखला पर हम ध्यान दें तो ऊँचे-ऊँचे शिखरों की आड़ में हमें लम्बे-चौड़े प्रदेश पर 'तिब्बत' नाम दिखाई देगा। भारत की सीमा तिब्बत की सीमा के साथ सैकड़ों मील चली गई है। यही कारण है कि भारत और तिब्बत के साथ हमारा गहरा सम्बन्ध है।

तिब्बत पहाड़ी प्रदेश पर बसा हुआ है अतः वह बहुत ऊबड़-खाबड़ है। वहाँ मैदान की बड़ी कमी है। इसीलिए वहाँ खेती-बाड़ी नहीं हो सकती। हिमालय की ऊँची-ऊँची चोटियाँ पार करके तिब्बत में पहुँचना पड़ता है अतः वहाँ तक कोई अच्छा रास्ता नहीं है। तिब्बत के लिए चीन और भारत से पैदल रास्ता जाता है। जाड़े के दिनों में बर्फ़ पड़ने के कारण यह मार्ग बन्द हो जाता है। तिब्बत में भी आने-जाने के लिए अच्छे मार्ग नहीं हैं। यही कारण है कि तिब्बत सारी दुनिया से कटा रहा। विज्ञान की वहाँ तक पहुँच नहीं हुई। वहाँ के लोग आज भी सातवीं शती का जीवन बिता रहे हैं।

तिब्बत में आज भी लोग भूत-प्रेत पर विश्वास करते हैं - उन लोगों का विश्वास है कि पेड़-पौधे और घर तथा पहाड़ी चट्टान में कोई-न-कोई प्रेत अवश्य रहता है। जन्म-मरण, दुःख-सुख, बीमारी और स्वस्थता सब कुछ इन भूत-प्रेतों के कारण ही होती हैं। भूत-प्रेतों को प्रसन्न करने के लिए उन्हें भोग लगाया जाता है। बलि दी जाती है। इन भूत-प्रेतों को दूर करने के लिए तिब्बत में हज़ारों ओझा हैं, जो दिन भर कोई काम नहीं करते। ओझा लोग ढोल और नगाड़े पर कुछ मंत्र लिख देते हैं। सायंकाल में ढोल-नगाड़े बजाये जाते हैं। तिब्बती लोगों का विश्वास है कि इनकी आवाज़ जहाँ तक पहुँचेगी वहाँ तक प्रेत बाधा नहीं पहुँचा सकेंगे।

तिब्बती लोग बहुत भोले-भाले होते हैं। वे झूठ और छल प्रपंच से बचते हैं। तिब्बत में भेड़ों का लालन-पालन चाव से किया जाता है। भेड़ उन्हें दूध ही नहीं देती ऊन भी देती है। इस ऊन से तिब्बती लोग शाल तैयार करते हैं। ये शाल बहुत महँगे होते है। तिब्बत से कस्तूरी भी आती है। तिब्बती लोग उद्योग धंधों से परिचित नहीं हैं, इसी लिए वे अपने ऊन तथा कच्चे माल का उपयोग नहीं कर सकते।

आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व भारत के कुछ बौद्ध-भिक्षु तिब्बत गये थे। इन लोगों ने वहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार किया। संस्कृत और पाली भाषा की बहुत-सी पुस्तकों का अनुवाद इन लोगों ने तिब्बती भाषा में किया। संस्कृत की बहुत-सी ऐसी पुस्तकें हैं

जो भारत में उपलब्ध नहीं हैं पर तिब्बत में मिल रही हैं।

तिब्बत का शासन भी दुनिया से निराला है। वहाँ का शासन बौद्ध-भिक्षुओं और बौद्ध मठों के अधीन है। बौद्ध-भिक्षु को वहाँ लामा कहते हैं। छोटे-छोटे लामा एक बड़े लामा के अधीन रहते हैं और ये बड़े लामा फिर एक लामा का आदेश मानते हैं। सबसे बड़ा लामा दलाईलामा कहलाता है दलाईलामा ही तिब्बत का शासक होता है।

दलाईलामा जब मरता है तो उसके मरते ही उसकी गद्दी किसी को नहीं दी जाती। जिस दिन दलाईलामा मरता है उस दिन जितने बच्चे तिब्बत में पैदा होते हैं उनमें दलाईलामा के चिह्न देखें जाते हैं। जिस लड़के में ये चिह्न मिलते हैं, वहीं गद्दी का अधिकारी बनता है। इस खोज में कभी कभी पाँच-पाँच और दस-दस वर्ष भी लग जाते हैं।

कुछ ही दिन हुए चीन की सेना तिब्बत में पहुँची है। वह वहाँ के शासन की नई व्यवस्था करना चाहती है।

अभ्यास :—

(१) तिब्बत कहाँ है और उसका भारत से क्या सम्बन्ध है ?

(२) तिब्बत की शासन-व्यवस्था कैसे चलती है ?

(३) तिब्बती लोग इतने पिछड़े हुए क्यों हैं ?

वनस्पति

संसार को हम दो भागों में बाँट सकते हैं। संसार की कुछ चीजें सजीव हैं और कुछ चीजें निर्जीव। सजीव और निर्जीव का भेद हम सरलता से जान सकते हैं। सजीव पदार्थ को खाने-पीने की ज़रूरत पड़ती है और वह बढ़ता-घटता है लेकिन निर्जीव और सजीव पदार्थों को पूरी तरह अलग अलग करना कठिन है। मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंग, वृक्ष-बेल सभी सजीव हैं और पत्थर, लोहा, सोना, चाँदी, मिट्टी, आदि निर्जीव।

सजीव सृष्टि भी दो हिस्सों में बँटी है। एक को हम जन्तु कह सकते हैं और दूसरे को वनस्पति। मनुष्य, पशु-पक्षी और कीट-पतंग तथा जलचरों को हम जन्तु कह सकते हैं; और पेड़-पौधे, बेल तथा गुल्मों को वनस्पति कह सकते हैं। जिस तरह निर्जीव और सजीव वस्तुओं को हम पूरी तरह अलग अलग नहीं कर सकते उसी तरह जन्तु और वनस्पति को हम अलग अलग नहीं कर सकते। वैसे तो कोई भी कह सकता है कि पीपल वनस्पति है और पीपल पर बैठी हुई चिड़िया जन्तु है, किन्तु कई जन्तु ऐसे होते हैं जो चट्टान की तरह एक ही जगह पड़े रहते हैं

और कई वनस्पतियाँ ऐसी हैं जो एक जगह से दूसरी जगह घूमती रहती हैं।

जन्तु और वनस्पति का मुख्य अन्तर यह है कि जन्तु चल-फिर सकता है और वनस्पति चल फिर नहीं सकती। लेकिन इन दोनों में यही बड़ा अन्तर नहीं है। सबसे बड़ा अन्तर है भोजन का। वनस्पति अपना भोजन हवा से और मिट्टी से प्राप्त करती है जब कि जन्तु अपना भोजन इस तरह प्राप्त नहीं कर सकते।

कुछ दिन पहले तक यूरोप के लोग वनस्पति में प्राण नहीं मानते थे। भारत के लोग पुराने ज़माने से वृक्ष में प्राण मानते आये हैं। कुछ दिन हुए अपने देश के एक बड़े वैज्ञानिक श्री जगदीशचन्द्र वसु ने यह सिद्ध किया कि वृक्षों में भी प्राण रहते हैं।

यदि हम पेड़-पौधों को ध्यान से देखें तो हमें बहुत-सी विचित्रताएँ देखने को मिलेंगी। मनुष्य वनस्पति से बहुत लाभ उठाता है। मनुष्य या पशु-पक्षियों के भोजन का बड़ा आधार वनस्पति ही है। इसके अतिरिक्त मनुष्य और पशु-पक्षी प्रतिक्षण जो अशुद्ध वायु अपनी साँस के साथ छोड़ता है उसकी अशुद्धता को दूर करने का बहुत कुछ काम पेड़-पौधे ही कर सकते हैं। हमारी अशुद्ध वायु उनके काम आती है और वे जो साँस छोड़ते हैं वह हमें लाभ पहुँचाती है। हमारे स्वास्थ्य के लिए पेड़-पौधों की साँस बहुत लाभ कर है।

दुनिया में कई पौधे ऐसे हैं जो अपनी रचना से हमें आश्चर्य में डाल देते हैं। आपने लाजवन्ती देखी होगी। यदि उसके पास आप अपना हाथ ले जाएँ तो उसकी पत्तियाँ शर्मा कर सिकुड़ जायँगी। आपके हाथ हटने के कुछ देर बाद वह पहिले जैसी हो जाती है। भू-मध्य रेखा के पास एक ऐसी लता पाई जाती है जिसकी पत्तियाँ तूँबी जैसी होती हैं। इसी लिए इसका नाम तुंबिलता पड़ा। तुंबिलता के पत्ते बहुत चिकने होते हैं। उनमें विशेष प्रकार का रस होता है। जब उसके रस से मोहित हो कर कोई मक्खी या जीव पत्ती पर बैठता है तो वह तुरन्त उसका खून चूस लेती है।

वनस्पति के तीन मुख्य अंग हैं। जड़, तना और पत्ते। जैसा कि पहले बताया गया है वनस्पति खुली हवा से अपना भोजन प्राप्त करती है। सूर्य की किरणों से भी उसे खुराक मिलती है। इसी लिए आपने देखा होगा कि वनस्पति का एक पत्ता दूसरे की आड़ में नहीं आता। प्रत्येक पत्ता खुल कर सूर्य-किरणों और वायु को ग्रहण करता है। पत्ते इस भोजन को ग्रहण करके उसे रस का रूप देते हैं। यही रस पूरे शरीर में जाता है। इसी तरह वनस्पति की जड़ भी भोजन ग्रहण करती है। जड़ें मिट्टी से पानी ही नहीं क्षार-पदार्थ भी लेती हैं। जड़ों की रचना बड़ी विचित्र होती है। कुछ जड़ें दूर दूर तक फैल जाती हैं। कुछ जड़ें अपनी जगह ही मोटी हो जाती हैं, जैसे गाजर, शलजम आदि। जड़ें मिट्टी से इस तरह सट कर आगे बढ़ती हैं

कि उन्हें अलग अलग नहीं किया जा सकता।

जड़ से लिए हुए भोजन को पत्तों तक और पत्तों के आहार को जड़ तक पहुँचाने का काम तना करता है। तना एक तरह से वृक्ष का संग्रहालय है। तना एक तरह से वृक्ष की रीढ़ है। कुछ वनस्पतियों के तने मजबूत होते हैं और कुछ के बहुत कोमल। कोमल तनेवाली वनस्पति या तो किसी का सहारा लेकर आगे बढ़ती है या फिर जमीन में रेंग-रेंग कर बढ़ती है। इस प्रकार की वनस्पति को ही लता अथवा बेल कहते हैं।

अभ्यास :—

(१) जन्तु और वनस्पति में क्या अन्तर है और उन्हें कैसे पहचाना जा सकता है।

(२) जड़, तना और पत्तों के कार्य बताइये।

(३) वनस्पति जन्तु के लिए लाभदायक क्यों है ?

शब्दार्थ

सकरूखाँ

लेखक श्री बलवन्त सिंह, सर्वोदय संघ के कार्यकर्ता, गान्धीवादी, अच्छे विचारक, हिन्दी के लेखक।

प्रकृति–स्वभाव। गिर्री–चरखी।
क्षेत्रफल–लम्बाई चौड़ाई का माप।
खैली–पशुओं के पानी के लिए बनाया गया स्थान।
इबादत–प्रार्थना। विभोर–मग्न।
राज–ओढ़। अप्रतिग्रह–त्याग।
अभिलाषा, आकांक्षा – इच्छा।
अस्तेय–चोरी न करना। दुआ–प्रार्थना।
खल्क–दुनिया।

बोनालू

लेखक श्री विमला वाघ्रे। हैदराबाद विश्वविद्यालय से आपने हिन्दी में एम. ए. किया है। अध्ययनशील हिन्दी सेवी।

मण्डित–शोभित। मन्थर–धीरे-धीरे।
निरामिष–मांस न खानेवाला। अशिष्ट–बचा हुआ।
सहचर–साथी। उद्भव–उत्पन्न होने की जगह।
शाक्त–देवी को माननेवाले।

हिमालय की यात्रा

लेखक श्री जवाहरलाल नेहरू। अँग्रेजी के प्रमुख लेखक। इतिहास तथा विज्ञान और राजनीति में विशेष प्रवृत्ति। यह लेख आपकी अँग्रेजी पुस्तक से अनुवादित किया गया है।

हिम–बर्फ। हिमाच्छादित–बर्फ से ढका हुआ।

ईदगाह

लेखक श्री प्रेमचन्द। हिन्दी के प्रमुख कहानी लेखक तथा उपन्यासकार।

सलामत–सुरक्षित। लीची–एक फल।
जिन्नात–भूत प्रेत। लेई-पूँजी–दौलत।

अनायास–बिना प्रयत्न । विवेक–अच्छा बुरा समझने का ज्ञान ।

विद्युत

काया पलट करना–पूरी तरह बदलना ।

प्रणाली–तरीक़ा । विद्युत–बिजली ।

मयूर–मोर । घर्षण–घिसना ।

समन्वय–मेल । अन्यत्र–दूसरी जगह ।

उत्पादन–उपज । प्रपात–पहाड़ से गिरने वाला जल-प्रवाह ।

माताजी की स्मृति में

लेखक श्री वंशीधरजी विद्यालंकार, अध्यक्ष हिन्दी-विभाग हैदराबाद विश्व विद्यालय । कवि, लेखक और आलोचक ।

विद्युत्पात-बिजली गिरना । महायात्रा–मृत्यु

कण्ठस्थ–याद । प्रतीत–मालूम ।

वृन्दावन–तुलसी । सम्भ्रान्त–प्रतिष्ठित ।

आत्माभिमान

संकेत–इशारा । विपरीत–उल्टा

मिथ्यभिमान–झूठा घमंड ।

गोदावरी

लेखक श्री गोपालराव अपसिंगीकर एम्. ए., एल्एल्. बी., विशारद, हिन्दी रत्न । हैदराबाद हिन्दी प्रचार सभा के परीक्षा मन्त्री तथा अनन्य और अनथक हिन्दी सेवी ।

प्रवाहित–बहनेवाली । पुण्यतिथि–मृत्युदिवस

शती–सौ वर्ष की एक शती होती है ।

परिक्रमा–किसी चीज़ के चारों तरफ़ घूमना ।

अर्जुन-कर्ण संवाद

सारथी-रथ चलाने वाला । रथी-रथ में बैठनेवाला वीर ।

सूत्र–सारथी पराक्रम-बल ।

हमारा पड़ौसी तिब्बत

मानचित्र–नकशा । शृंखला–कतार

वनस्पति

सजीव–जानदार । निर्जीव–बेजान ।